तंत्री तथा संपादक :
दीपक देसाई
वर्ष: ३, अंक : १
अखंड क्रमांक : २५
नवम्बर, २००७

दादावाणी

**नहीं बिसराये जग में कभी
यह अनुपम 'अक्रम विज्ञानी'**

Publisher, Owner & Printed by : Deepak Desai on behalf of Mahavideh Foundation, 5, Mamtapark Soc., Usmanpura, Ahmedabad-380014 Gujarat, India.

संपादकीय

इस कलिकाल में विनाशी सुख-दु:ख में उलझे हुए और सुलगती भट्ठी में चारों ओर से शकरकंद की तरह भूने जा रहे जीवों को अविनाशी, सनातन सुख और आत्यंतिक मुक्ति का मार्ग दिखानेवाले अक्रम विज्ञानी परम पूज्य श्री दादा भगवान, भादरण निवासी ज्ञानी पुरुष, श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल (दादाश्री) के देहमंदिर में जून १९५८ में अपूर्व अक्रम विज्ञान प्रकट हुआ और जगत के सारे गूढ़ रहस्यों के नि:संदेह समाधान प्राप्त हुए। ऐसे, कुदरत ने जगत के चरणों में, अनुपम अक्रम विज्ञान रूपी उपहार पेश किया। इस प्रकार इस कलिकाल में 'असंयति पूजा' नामक 'एक महान आश्चर्य' का सर्जन हुआ। अर्थात् गृहस्थ के भेस में ज्ञानी प्रकटे कि जिन्होंने जगत के लोगों को अद्‌भूत आत्मज्ञान प्रदान करके, मोक्षमार्ग के प्रति मोड़ने के पुनित कार्य में निमित्त बनकर जगत कल्याण के कार्य में अपूर्व योगदान दिया।

कृष्ण भगवान ने कहा है कि 'ज्ञानी पुरुष ही मेरा आत्मा है।' श्रीमद् राजचंद्रजी भी कहा करते थे कि, 'ज्ञानी पुरुष देहधारी परमात्मा ही हैं।' दादाश्री अक्सर कहा करते थे कि हम तो ज्ञानी पुरुष हैं और हमारे भीतर जो प्रकट हुए हैं, वे चौदह लोक के नाथ हैं, जो ३६० डिग्रीवाले पूर्ण भगवान हैं। हमें इस काल की वजह यह केवलज्ञान ३५६ डिग्री पर रूका है।

सारे संसार के स्वामी होने पर भी उन्होंने कभी स्वामीत्व नहीं जताया है। कभी किसी के गुरु नहीं हुए और सारे जगत के शिष्य होकर रहे। संपूर्ण लघुतम भाव में, निरालंब पद में रहकर स्वपरिणति में बरते और आदर्श व्यवहार निभाकर जगत को एक अप्रतिम उदाहरण प्रस्तुत किया।

दादाश्री की एक ही भावना थी कि, 'जो सुख मैंने पाया वह सुख सारा जग पाये।' वे आत्यंतिक करुणा से कहा करते थे कि, 'लोगों के दु:ख हम से देखे नहीं जाते हैं। मेरी भावना है कि जगत के सारे जीव सुख और शांति प्राप्त करें और कुछ जीव मोक्ष प्राप्त करें। हम सभी को मोक्ष में पहुँचाकर फिर मोक्ष में जायेंगे। और हम तो यहीं निरंतर मोक्ष में ही रहते हैं। हमें तो केवल एक ही भावना है कि, सारे जगत का कल्याण कैसे हो!' वे कहा करते कि, 'आधे जगत का कल्याण हमारे हाथों होगा और शेष आधे जगत का कल्याण हमारे फोलोअर्स (अनुयायी) के हाथों होगा।' हमारा कल्याण तो हो गया है, अब लोगों का कल्याण कैसे हो यही हमारी भावना होनी चाहिए। हमें सिर्फ भावना करनी है, शेष कार्य कुदरत सँभालेगी।

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता फी) १५ साल का भारत : ८०० रुपया, यु.एस.ए. : १०० डॉलर, यु.के. : ७५ पाउन्ड
वार्षिक भारत : १०० रुपया, यु.एस.ए. : 10 डॉलर, यु.के. : 7 पाउन्ड, DD/ MO 'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से भेजे।
Printer/Press : Mahavideh Foundation, Basement, Parshvanath Chambers, Usmanpura, **Ahmedabad**-380014

पूर्ण ज्ञानावतार, करुणासागर, वात्सल्यमूर्ति दादा भगवानने हमें केवल एक ही घंटे में अनंत जन्मों के परिभ्रमण का अंत लाकर, यहाँ संसार में रहते हुए भी मोक्ष की प्रसन्नता में रहना सिखा दिया है। ऐसे परमात्मा के प्रति हम अपना अहोभाव (पूज्य भाव) कैसे व्यक्त कर सकें? जिन्हें इस जगत की किसी भी वस्तु की स्पृहा नहीं है, ऐसे ज्ञानी पुरुष का ऋण हम इस जगत की किसी वस्तु से अदा नहीं कर सकते। उन्होंने ऐसी अमूल्य वस्तु की प्राप्ति हमें करवाई है। अब हमारा नैष्ठिक कर्तव्य क्या बनता है? हम लघुत्तम भाव से, तन-मन-धन से, समर्पित होकर उनके जगतकल्याण के कार्य में निमित्त बनें। सीमंधर स्वामी के जगत कल्याण रूपी मिशन के विश्व प्रवर्तन दादाई अभियान में, अपनी इच्छा के अनुरूप योगदान देकर हमारा ऋण अदा करके कृतार्थ बनें।

ज्ञानीपुरुष का जन्म हुए सौ साल बीत गये हैं। कार्तिकी शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी, २३ नवम्बर २००७ और शुक्रवार के दिन हमारे सभी के हृदय में बिराजते परम कृपालु परमात्मा 'दादा भगवान' का सौवाँ जन्मदिवस है। एक पूरी शताब्दी व्यतीत हो चूकी है और ऐसे अद्‌भूत भेदविज्ञानी निमित्तभाव से जगतकल्याण का कार्य पूरा करके स्थूल रूप से बिदा हो गये हैं। लेकिन क्या वे सही मानों में बिदा हो गये हैं? हम उन्हीं के शब्दों को याद करें, उन्होंने कहा था, 'यह देहरूपी बुलबुला तो कल फूट जायेगा पर यह आज्ञारूपी दादा तो सदैव आपके साथ ही रहनेवाले हैं। हम कहीं नहीं जानेवाले, हम महात्माओं के हृदय में बैठ जायेंगे।' कवि ने यथार्थ गाया है कि,

'दादा कहीं गये ही नहीं पर हृदियों में बिराजते हैं,
मेरे भीतर बैठे हुए दादा भगवान बोलते हैं,
दादा भगवान के असीम जय जयकार हो।'

यह पूरा साल हम परम पूज्य दादा भगवान की जन्म शताब्दी और ज्ञान प्राकट्य की स्वर्णीम् जयंति के रूप में मनाने जा रहे हैं। इस पावन अवसर पर, आइये हम सब साथ मिलकर समग्र विश्व में आत्मकल्याण की भावना का प्रसार करें और सब साथ मिलकर गायें,

मनायें दादा भगवान की सौवीं जन्मजयंति,
मनायें अवसर ये उमंग से, हो झाँकी पूर्णमाशी की,
न भूतो, न भविष्यति, यह अनुपम प्रेमलमूर्ति।

दीपक देसाई ...

संपर्क सूत्र : त्रिमंदिर, सीमंधर सीटी, अहमदावाद-कलोल हाइ वे, पो.ओ.: अडालज, जि.: गांधीनगर-३८२४२१
फोन : (०७९)३९८३०१००, e-mail : dadavani@dadabhagwan.org, Website : www.dadabhagwan.org
अहमदाबाद : (०७९) २७५४०४०८, २७५४३९७९, **मुंबई :** (०२२) २४१३७६१६
U.S.A. : 785-271-0869, **U.K.** : 020-8204-0746

नहीं बिसराये जग में कभी यह अनुपम 'अक्रम विज्ञानी'

अक्रम की यह लब्धि ने किया 'हमें' पसंद

प्रश्नकर्ता : आप मुक्ति में विचरते हैं लेकिन वह सिद्धि प्राप्त कैसे हुई?

दादाश्री : यह हमें प्राप्त हुई लब्धि है। 'दीस इझ बट नैचुरल'। मैं १९५८ में सूरत के स्टेशन पर बैठा था, तब जबरदस्त भीड़ में भी यह ज्ञान प्रकट हुआ। लोग मुझे पूछते हैं कि यह ज्ञान आपको कैसे हुआ? मैंने कहा, यदि आप नकल करना चाहते हैं तो नकल हो सके ऐसा नहीं है। यदि नकल करने जैसा होता तो मैं बताता कि भैया, मैं इस रास्ते पर यों गया, यों गया और मुझे प्राप्त हो गया। मैं जिस रास्ते पर गया था, उस रास्ते पर इतना बड़ा इनाम मिले ऐसा था ही नहीं। मैं तो साधारण पाँच प्रतिशत की आशा रखता था, फाइव परसेन्ट तो क्या उसमें से भी एक प्रतिशत की आशा रखता था कि हमारी महेनत काम आये तो इसमें से हमें एकाध परसेन्ट मिल जाये।

प्रश्नकर्ता : आपको बट नैचुरल ज्ञान हुआ, यह क्या है? इसे समझाइये ज़रा।

दादाश्री : 'बट नैचुरल' ज्ञान किसीको ही होता है। कोई कहे कि, 'मैंने खुद किया है।' तो वह ज्ञान अधूरा रहता है। यह तो 'नैचुरली', अपने आप हुआ है। यदि किया हुआ होता तो अस्सी प्रतिशत विकल्प कम हुआ, तो बीस प्रतिशत शेष रहता। यह तो शत प्रतिशत निर्विकल्प है, यह 'वीतराग विज्ञान' है।

प्रश्नकर्ता : यह आपको 'बट नैचुरल' हुआ, मगर कैसे?

दादाश्री : यह कैसे मतलब, उसके सारे सायन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडन्स एकत्र हो गये, इसलिए प्रकट हो गया।

प्रश्नकर्ता : कौन-से एविडन्स मिले?

दादाश्री : सारे एविडन्सीस मिले। सारे जगत का कल्याण होना होगा, वह काल भी परिपक्व

'ज्ञानी पुरुष' का एक अक्षर ही यदि समझ में आया तो कल्याण ही हो जाये।

हुआ होगा और इसलिए कोई निमित्त भी तो चाहिए न?

वहाँ बरता अद्‍भूत सुख

प्रश्नकर्ता : आपको जब ज्ञान हुआ तब ख्याल में आया था कि मुझे यह ज्ञान हुआ है?

दादाश्री : अरे! ख्याल तो क्या, उस घड़ी मानों सिद्धगति में बैठा हूँ ऐसा अपार सुख बरता। बेंच पर बैठा था फिर भी सिद्धगति का सुख बरता। मेरे साथ सेवा में उपस्थित थे, उसका तो कुछ किये बगैर ही मोक्ष हो गया! यह अक्रम तो अजायब निकला है!

प्रश्नकर्ता : यह अक्रम ज्ञान कितने अवतारों का लेखाजोखा है?

दादाश्री : अक्रम विज्ञान जो प्रकट हुआ है, वह कई अवतारों का लेखा-जोखा सब साथ में मिलकर अपने आप कुदरती रूप से ही प्रकट हो गया है।

मुझे तो पता तक नहीं था कि ऐसा ज्ञान होगा। मुझे तो ऐसा होगा ऐसा था ही नही! ऐसा तो कल्पना में भी नहीं आया था! मैं समझा कि थोड़ा उजाला होगा, कुछ साधारण-सा, ताकि शांति रहेगी मगर यह तो न जाने क्या से क्या हो गया! सारे बादल ही हट गये!!

कई लोगों का कल्याण हो जानेवाला है। क्योंकि साहजिक रूप से कल्याण हो, ऐसा मोक्षमार्ग कभी निकला हो तो इस बार निकला है। सहज कल्याण! हिन्दु, पारसी, मुसलमान, सब को रास आया है न! किसी एक ही कोम को ही रास आये ऐसा नहीं है, सभी को रास आये ऐसा ज्ञान है।

पहुँचे ज्ञान के किनारे पर

प्रश्नकर्ता : आपको ज्ञान हुआ मतलब क्या अनुभव हुआ?

दादाश्री : कुछ नहीं। यह सारा अहंकार पिघल गया। इस किनारे से उस किनारे पर पहुँच गया हूँ, ऐसा लगा। अज्ञानता के किनारे पर से ज्ञान के किनारे पर मैं पहुँच गया हूँ, ऐसा लगा।

अहंकार चला गया! किसी के खोजने पर भी वह नहीं मिले ऐसे जगत संबंधी सारे स्पष्टीकरण हो गये। किसी प्रकार का 'पझल' ही नहीं रहा। 'ईश्वर कौन? कैसे चलता है? कर्म कैसे होता हैं? देवगति क्या है?' विधीन वन अवर (एक घंटे तक) मुझे दिखाई दिया। मुझ में चेन्ज (बदलाव) हुआ, इससे मैं नहीं समझ जाऊँ कि इसका क्या कहने! इतना बड़ा चेन्ज! उस समय वह जो सुख चखा (अनुभव किया), वह फिर कभी नहीं गया।

प्रश्नकर्ता : ऐसी अवस्था कितनी देर तक रही?

दादाश्री : एक घंटे तक। एक घंटे में तो सब एक्झेक्ट ही आ गया। फिर तो सारा परिवर्तन

'मैं कौन हूँ' यह जानना हो तो 'ज्ञानी पुरुष' के पास जाना पड़े।

हुआ दिखाई दिया। अहंकार तो मूल में से चला गया। क्रोध-मान-माया-लोभ, की सारी कमज़ोरियाँ ही चली गई। मैंने तो ऐसी आशा ही नहीं रखी थी।

ज्ञान समय की स्थिति

प्रश्नकर्ता : आपको ज्ञान हुआ उस समय की आपकी स्थिति के बारे में, आप हमें बतायेंगे ज़रा?

दादाश्री : स्थिति तो यही की यही। इसमें रीति नहीं होती। और सभी भीतरी आवरण टूट गये।

अंदर आवरण हट गये तब। उलझन के समय आपको अंदर से सूझ पड़ती है कि नहीं पड़ती? वैसे आवरण टूटने पर सूझ पड़े। वैसे यह आवरण टूटने पर जगत कौन चलाता है? कैसे चलता है? मैं कौन हूँ? यह कौन है? वे सारे ख्याल खुले हो गये।

उस दिन से 'मैं' अलग ही स्वरूप में

प्रश्नकर्ता : आपको जब ज्ञान प्राप्त हुआ, उस समय का आप ज़रा वर्णन कीजिए न? उस समय आपकी कैसी भावनाएँ थी? उस समय का अनुभव बताइये न?

दादाश्री : अनुभव का तो ऐसा है न, उसके बारे में कितना कह सकूँ? तब मुझे आनंद हुआ, मुझे जगत विस्मृत हो गया था। मेरी भावनाओं का कोई चेन्ज नहीं था। मैं ताप्ति रेलवे लाइन पर, सोनगढ-व्यारा है, वहाँ पर मेरा बिझनेस था, वहाँ पर गया था। वहाँ से लौटते समय सूरत स्टेशन पर रुका था। एक भाई हमेशा से मेरे साथ रहा करते थे। उन दिनों में सूर्यनारायण के अस्त होने से पहले रात का भोजन करता था। इसलिए मैंने ट्रेन में ही भोजन कर लिया था और यहाँ सूरत स्टेशन पर छह बजे मैं बेंच पर अकेला बैठा था। उस घड़ी मुझे यह ज्ञान उत्पन्न हो गया कि वर्ल्ड क्या है और कैसे चलता है? कौन चलाता है और यह सब कैसे चलता है? उसका सारा हिसाब मैंने देख लिया। यानी उस दिन मेरा इगोइज़म और सबकुछ खत्म हो गया। फिर मैं अलग ही स्वरूप में रहने लगा, विधाउट इगोइज़म, (बिना अहंकार) विधाउट ममता। ए.एम.पटेल वैसे ही थे, पर मैं अलग स्वरूप हो गया था। फिर निरंतर समाधि के अलावा एक सेकिन्ड के लिए भी मैंने और कुछ नहीं देखा है।

मौलिक तत्त्व का अवक्तव्य अनुभव

वहाँ पर मुझे एकदम ही स्फूरणा हुई और 'मैं अंबालाल हूँ' यह सारा ख़्याल निकल गया और जागृति इतनी बढ़ गई कि सारा ब्रह्मांड प्रकाशमान हो गया। मैंने सबकुछ देख लिया कि 'इसका कर्ता कौन? जगत कैसे चलता है? भगवान कौन है? कहाँ से हुआ? निमित्त कौन? अवतार क्या हैं? ये सारे नाते-रिश्तेदार क्या है? आप कौन हैं? मैं कौन हूँ? यह कौन है? ये सभी किस आधार पर एकत्र होते हैं?' वे सारे स्पष्टीकरण हो गये। एक घंटे में उसका सारा विवरण मेरी समझ में आ गया और

सम्यक्त्व तो ज्ञानी पुरुष के पास प्राप्त होता है। उसके लिए निमित्त चाहिए। सम्यक्त्व होने के बाद चिंता-झंझट नहीं होती।

अपार सुख, पारावार सुख का अनुभव हुआ। और परमानंद हुआ। फिर मुझे सारा स्पष्टीकरण मिल गया। शास्त्रों में पूरा नहीं लिखा होता है। शास्त्रों में तो जहाँ तक शब्द होते हैं, वहाँ तक का लिखा होता है और जगत तो शब्द से बहुत आगे है।

अब, वह जो स्पष्टीकरण हुआ, कि मेरी समझ में जो आया, वह सब वाणी से निकले ऐसा नहीं है। वह तो आप जब स्वयं चखेंगे (अनुभव करेंगे) तब आपकी समझ में आयेगा। मगर यहाँ मैं वह सब शब्दों से आपको समझाता हूँ। मूल वस्तु तो आप जान ही नहीं सकते, क्योंकि वहाँ शब्द नहीं है। ब्यौरेवार वाणी में नहीं आ सकता। यह तो शब्दों में जितना कहा जाये, उतनी बाहर के हिस्से की बात मैं बता रहा हूँ। वह मूल वस्तु तो नहीं न! वह तो आप उस जगह पर आयें तब आपको पता चले कि क्या था!

भीड़ में एकांत और प्रकटे भगवान

प्रश्नकर्ता : सूरत के स्टेशन पर जो अनुभूति हुई, एकदम जो डिरेक्ट प्रकाश आया, वह अपने आप अचानक ही?

दादाश्री : हाँ, अचानक ही, अपने आप ही प्रकाश हो गया। सूरत के स्टेशन पर एक बेंच पर बैठे थे, भीड़ बहुत थी, मगर यह अचानक ही प्रकाश हो गया। फिर सब पूरा ही दिखाई दिया। उसके बाद सारा परिवर्तन ही हो गया।

प्रश्नकर्ता : मगर उस समय दुनिया के सारे मनुष्य तो वही के वही ही होंगे न?

दादाश्री : हाँ, फिर तो मनुष्यों के पेकिंग ही दिखने लगे और पेकिंग के अंदर का माल है वह भी दिखने लगा। वेराइटिझ ऑफ पेकिंग (शरीर) और माल एक ही प्रकार का (शुद्धात्मा)। इसलिए सारा जगत वहाँ पर तुरंत ही अलग दिखाई दिया।

प्रश्नकर्ता : भक्ति पद में जो 'भीड का एकांत' और 'कोलाहल में शुक्लध्यान' लिखा है, उसका क्या भावार्थ है?

दादाश्री : 'भीड़ का एकांत' यानी क्या कहते हैं कि मनुष्य को एकांत में एकांत नहीं रह सकता, क्योंकि मन है न! यानी भीड़ हो तब एकांत। और 'कोलाहल में शुक्लध्यान' उत्पन्न हुआ। आस-पास कोलाहल, बहुत भीड़ थी और मैं अपने शुक्लध्यान में था। मतलब सारा जगत पूरा का पूरा मुझे ज्ञान में दिखाई दिया, जैसे है वैसे दिखाई दिया।

१९५८ का वह अद्‌भूत दर्शन

प्रश्नकर्ता : आपको १९५८ में सूरत में जो दर्शन हुआ, वह कैसा था?

जिसे बिलकुल ही अहम् नहीं हो वह 'ज्ञानी पुरुष'।

दादाश्री : इस देह में से मानो मुक्त हो गया हों, ऐसा लगा।

प्रश्नकर्ता : वह मुक्तता कैसी लगी?

दादाश्री : 'एब्सोल्युट' मुक्त ही, वह दशा अलग ही थी। उसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

प्रश्नकर्ता : वह 'मोमेन्ट' था, उसके पहले आपको कुछ लगा था कि कुछ होनेवाला है?

दादाश्री : शांति बहुत रहा करती थी। पर वह अहंकार के साथ वाली शांति कहलाये, वह काम की नहीं। वह तो अज्ञानी को भी रहती है।

प्रश्नकर्ता : उस समय स्टेशन पर आपका आनंद अनोखा था?

दादाश्री : ज्ञाता-द्रष्टा, परमानंद सारे गुणों के साथ अलग हो गया था। देह में नहीं, वचन में नहीं, मन में नहीं, ऐसा अलग हो गया था। उसे ज्ञान प्राप्त हुआ कहलाये। ज्ञान वही आत्मा।

प्रश्नकर्ता : आपको ज्ञान हुआ बाद में ज्ञान-प्रकाश उतना ही रहता है कि बढ़ा करता है?

दादाश्री : हमारा तो यह 'अनुभव ज्ञान' है। उसमें दो प्रकार का प्रकाश नहीं होता, निरंतर एक ही प्रकार का प्रकाश रहे, हमें आत्मा का स्पष्ट अनुभव होता है। जब तक आत्मा का स्पष्ट अनुभव नहीं होता तब तक ज्ञान बढ़ता रहे, लेकिन स्पष्ट अनुभव हो गया मतलब वह ज्ञान पूरा हो जाये।

प्रश्नकर्ता : आत्मा का अनुभव पुद्‌गल को हुआ? वह अनुभव किसे हुआ?

दादाश्री : उस अनुभव में तो, खुद ने खुद को ही जाना, और कुछ नहीं। पराये को 'मैं' मानता था, इसलिए खुद ने खुद को जाना कि, 'यह मैं हूँ, यह नहीं।' दोनों अलग पड़ गया।

नहीं तमन्ना तारीख़ की भी...

प्रश्नकर्ता : दादाजी, आपको ज्ञान हुआ उस दिन तारीख़ कौन-सी थी?

दादाश्री : वह साल तो अट्‌ठावन का था। मगर तारीख़ तो हमें मालूम नहीं, क्या पता था कि इसको नोट करने की ज़रूरत पड़ेगी। मैं तो समझा कि अब हमारा निबटारा हो गया।

प्रश्नकर्ता : उस पर उपयोग देकर खोजनी तो पड़ेगी न?

दादाश्री : नहीं, नहीं, वह तो अपने आप मिलनी होगी तो मिल जायेगी। हम कहाँ झंझट में पड़े इस समय?

प्रश्नकर्ता : वह बारीस का मोसम था क्या?

दादाश्री : नहीं, वह बारीस और गरमी के बीच का मौसम था।

'क्रमिक विज्ञान' है ऐसा यह 'अक्रम विज्ञान' है। 'अक्रम विज्ञान' पुस्तकों में नहीं है, वह 'ज्ञानी' के हृदय में है।

प्रश्नकर्ता : महीना जुलाई का था, क्या?

दादाश्री : जुलाई नहीं, जून था। हमें तो उसकी परवा तक नहीं थी। हमें तो उजाला हो गया उससे निसबत थी।

समझ, अक्रममार्ग की

प्रश्नकर्ता : आपको जो उपलब्धि हुई उससे पहले आपने भी क्रमिकमार्ग पर कुछ किया तो होगा न?

दादाश्री : बहुत, उस क्रमिकमार्ग का ही यह सब किया हुआ है। लेकिन उदय अक्रम का आया। क्योंकि अनुत्तीर्ण हुए न! केवलज्ञान में अनुत्तीर्ण हुए न! इसलिए उदय में यह अक्रम आकर खड़ा रहा।

प्रश्नकर्ता : आपके द्वारा प्रवर्तन में आये इस अक्रममार्ग के बारे में विशेष समझायेंगे?

दादाश्री : अहंकार का 'फूल स्टॉप'(पूर्ण विराम) उसका नाम 'अक्रम विज्ञान' और अहंकार का 'कॉमा'(अल्पविराम) उसका नाम 'क्रमिक विज्ञान'। यह आंतरविज्ञान कहलाता है, जो खुद को सनातन सुख की ओर ले जाता है। मतलब निज का सनातन सुख प्राप्त करवाता है, वह आत्मविज्ञान कहलाये और जो 'टेम्परारी एडजस्टमैन्टवाला' सुख कराये, वह सब बाह्यविज्ञान कहलाये। बाह्यविज्ञान अंत में विनाशी है और विनाशक है और यह सनातन है और सनातन करनेवाला है।

क्रम-अक्रम का भेद

प्रश्नकर्ता : क्रमिकमार्ग से अक्रम भिन्न कैसे है?

दादाश्री : तीर्थंकरों का जो ज्ञान है वह क्रमिकज्ञान है। क्रमिक यानी सीढियाँ चढ़ना। जैसे-जैसे परिग्रह कम करते जायें, वैसे-वैसे मोक्ष की ओर बढ़ते जायें और ऐसा करते-करते मोक्ष तक पहुँच पायें। वह भी लम्बे अरसे के बाद और यह अक्रमविज्ञान मतलब क्या? सीढ़ियाँ नहीं चढ़नी, लिफ्ट में बैठ जाना और बारहवीं मंजिल पर पहुँच जाना। ऐसा यह लिफ्टमार्ग निकला है। यानी जो यह लिफ्टमार्ग में बैठ गये, उनका कल्याण हो गया। मैं तो निमित्त हूँ। इस लिफ्ट में जो बैठा, उसका हल निकल आये।

अक्रम मार्ग से मुक्ति

यह अक्रम विज्ञान है, इसलिए इतना जल्दी सम्यक्त्व होता है। वर्ना आज क्रमिकमार्ग में सम्यक्त्व हो सके ऐसा है ही नहीं। यह अक्रम विज्ञान तो बहुत उच्च कोटि का विज्ञान है। आत्मा और अनात्मा के बीच यानी आपकी और परायी ऐसे दो चीजों का बँटवारा कर देते हैं। यह हिस्सा आपका और

गुरु-चाबी बगैर गुरु कैसे हो सके? 'हम ज्ञानी' गुरू-चाबी देते हैं। वह मिलने पर फिर नहीं डूबे।

यह आपका नहीं, और बीच में 'लाइन ऑफ डिमार्केशन' डाल दूँ, विधिन वन अवर(एक घंटे में)। फिर आप खुद महसूस करें कि मैं 'सेफसाइड'(सलामत) पार हो गया हूँ। आप खुद माथापच्ची करने जायें तो लाख जन्मों में भी सही ठिकाने पर नहीं पहुँचे।

काम निकाल लीजिए

'हम' जगत कल्याण के स्वामी नहीं है, निमित्त हैं। जो पुण्यवंत हो, वे तो घर बैठे लाभ ले जायें। पुण्यवंतों का फल यानी यह अक्रमविज्ञान है। वर्ना अक्रम तो होता होगा कहीं? यह तो बाद में जब इतिहास की रचना होगी तब लोग पछतायेंगे और सोचेंगे कि उस समय मैं था कि नहीं? फिर हिसाब लगाने पर मालूम होगा कि उन दिनों तो मैं पैंतीस मंजिलवाले फ्लैट बनाने के काम में रत था। सारे संयोग आ मिलें पर यह अक्रम विज्ञान का संयोग आ मिले ऐसा नहीं है। यहाँ 'सत् संयोग' है। वह तो ज्ञान प्राप्ति के दूसरे दिन खुद को जात-अनुभव होने पर ही समझ में आये।

प्रश्नकर्ता : हमारी समझ में ऐसा आता है कि आपका जो मार्ग है वह बहुत अलौकिक मार्ग है।

दादाश्री : अलौकिक, बहुत अलौकिक! ऐसा ज्ञानावतार दस लाख वर्षों में एक बार होता है। यहाँ घंटेभर में मोक्ष हो जाये ऐसा है। इसलिए यहाँ तो अपना काम बना लेना है। मतलब अपना काम बना लेना। यह तो काम बना लेने जैसा स्टेशन (जगह) है। यह धर्म नहीं है। यहाँ पर मंडन नहीं है। मंडन करने पर दूसरे का खंडन करना पड़े। यहाँ किसी का खंडन-मंडन नहीं है। यहाँ तो शुद्ध भगवान प्रकट हुए हैं। यहाँ तो जितनों का कल्याण हो सके उतनों का कल्याण कर जाइए।

नहीं कोई प्रत्यक्ष गुरु इस भव में

प्रश्नकर्ता : आपके गुरु की पहचान करवायेंगे?

दादाश्री : गुरु तो इस भव में प्रत्यक्ष मिले होने पर गुरु कहलाये। प्रत्यक्ष कोई मिला नहीं है। साधु-संत मिले थे पर गुरु करने योग्य कोई नहीं मिला था। उनके साथ सत्संग किया था, सेवा की थी, पर गुरु करने योग्य कोई नहीं था। प्रत्येक भक्तों का, जो सभी ज्ञानी हुए थे, उन सभी को पढ़ा था पर रूबरू कोई नहीं मिला था।

ऐसा है न, श्रीमद् राजचंद्रजी को गुरु नहीं मान सकते, क्योंकि रूबरू होने पर गुरू मान सकें। अन्य पुस्तकों का भी आधार था, लेकिन राजचंद्रजी की पुस्तकों का आधार अधिक था।

मैं तो श्रीमद् राजचंद्रजी की पुस्तकें पढ़ता था, महावीर भगवान के शास्त्र पढ़ता था, कृष्ण भगवान की गीता पढ़ता था, वेदांत के खंडों की पढ़ाई करता था, स्वामीनारायण का भी पढ़ता था, मुस्लिम का भी पढ़ा करता था। और ये सभी क्या कहना चाहते हैं, सभी के कहने का आशय क्या है और उद्देश्य

क्या करने से मोक्ष में जा सकें? भगवान ने कहा कि, सम्यक्त्व होने पर जा सके या 'ज्ञानी पुरुष' की कृपा होने पर।

क्या है, यह जान लिया था। सभी का सही है, मगर सब सब की कक्षा में। अपनी-अपनी डिग्री तक सही है। तीन सौ साठ डिग्री हो तो कोई पचास डिग्री पर आया है, कोई अस्सी डिग्री तक पहुँचा है, कोई सौ डिग्री पर आया है, कोई डेढ़ सौ डिग्री तक आये हैं। सही सब का है, पर तीन सौ साठ डिग्री किसी के पास नहीं है। भगवान महावीर की तीन सौ साठ डिग्री थी। तीन सौ साठ डिग्री पर संपूर्ण भगवान कहलाये और यह 'ए.एम.पटेल' तीन सौ छप्पन डिग्री पर हैं। उनमें चार डिग्री कम है, इसलिए वे अलग हुए, वर्ना 'यह' भी 'महावीर' ही कहलाते।

जगत रहस्य का ब्योरा, ज्ञानी के पास

तीन सौ साठ डिग्री का एक्सेप्ट (स्वीकार) करे वह ज्ञान कहलाये। हमें सारी तीन सौ साठ डिग्री मान्य होती है, इसलिए हम ज्ञानी हैं। क्योंकि हम सेन्टर (केन्द्र) में बैठे हैं और इसलिए हम फेक्ट (सत्य) बता सकते हैं। इस जगत को किसी ने बनाया नहीं है। पझलसम हो जाने की वज़ह से पझल कहना पड़ता है। बाकी तो जगत इटसेल्फ (अपने आप) बना है और वह हमने अपने ज्ञान में, हमने खुद ने देखा है। इस जगत का एक भी परमाणु ऐसा नहीं है, जिसमें हम नहीं विचरे हों। जगत में रहकर और उसके बाहर रहकर मैं यह बता रहा हूँ।

इस पझल (समस्या) को जो सॉल्व करे (सुलझाये), उसे परमात्मापद मिलता है और जो सोल्व नहीं कर सके, वे पझल में ही डीझोल्व हो गये है (उलझ गये हैं)। हम यह पझल सोल्व करके बैठे हैं और परमात्मपद की प्राप्ति की है। हमें यह चेतन और अचेतन दोनों ही अलग दिखाई देतें हैं।

ज्ञानी कराये पहचान, 'दादा भगवान' की

प्रश्नकर्ता : आपश्री को 'दादा भगवान' क्यों कहते हैं?

दादाश्री : आपश्री के रूप में आप किसे पहचानते हैं? यह जो दिखाई देते हैं, उसे कहते हैं? आप तो उसे ही पहचानते है न? यह जो दिखाई देते हैं वे तो भादरण गाँव के पटेल हैं और 'कोन्ट्रेक्ट' का धंधा करते हैं। और मैं तो ज्ञानी पुरुष हूँ। 'दादा भगवान' तो अंदर जो व्यक्त हुए हैं, आत्मा व्यक्त हुआ है, प्रकट हुआ है, वे 'दादा भगवान' हैं, जिन्हें संसारी 'प्रकट पुरुष' कहते हैं! यह जो दिखाई देते हैं, वे तो 'अंबालाल मूलजीभाई पटेल' हैं और भीतर प्रकट परमात्मा स्वरूप बैठे हैं, वे 'दादा भगवान' हैं। और वही चौदह लोक के नाथ है। यानी जो कभी भी सुनने में नहीं आया हो, ऐसे यहाँ प्रकट हुए हैं।

यानी 'दादा भगवान' तो अलग हैं और मैं अलग हूँ। मैं दादा भगवान को नमस्कार करता हूँ, क्योंकि मुझे तीन सौ साठ डिग्री पूरी करनी है।

आत्मज्ञानी की भक्ति करने से उनकी कृपा उतरे ताकि सम्यक्त्व हो जाये।

हमने इस अंबालाल मूलजीभाई के साथ क्षणभर के लिए भी तन्मयता नहीं की है। जब से हमें ज्ञान प्रकट हुआ तब से दीस इझ माय फर्स्ट नेबर (यह मेरे प्रथम पड़ोसी हैं), पड़ोसी की तरह रहते हैं।

अब इस भेद की लोगों को लम्बी समझदारी नहीं होती है, दादा भगवान प्रकट हो गये हैं, कभी किसी समय ही ऐसा चौदह लोक का नाथ प्रकट होता है। मैं खुद देखकर बता रहा हूँ, इसलिए काम निकाल लीजिए।

स्वरूप, दादा भगवान का

उनका स्वरूप क्या है? ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप वह उनका स्वरूप है। ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप के आधार पर जो अनुभव में आते हैं, वे 'दादा भगवान' हैं।

बाकी यह तो पटेल है। कल यह बुलबुला फूट जाये तो लोग उसे जला डालें और 'दादा भगवान' को कोई जला नहीं सकता, क्योंकि अग्नि स्थूल स्वरूप है और आत्मा सूक्ष्म है। स्थूल सूक्ष्म को कैसे जलायें? वैसे ही ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप स्वरूप में रहे 'दादा भगवान', आपके भीतर भी विराजमान हैं। जो आप खुद ही हैं।

वे दोनों एक ही हैं

प्रश्नकर्ता : ये सभी जो कीर्तन भक्ति करते हैं, 'दादा भगवान के असीम जय जयकार हो' बोलते है, उसमें दादा भगवान की पहचान कैसे होती हैं?

दादाश्री : जो सच्चे दादा भगवान, जो पूरे वर्ल्ड के मालिक हैं, पूरे वर्ल्ड के भगवान हैं, उस दादा भगवान की बात करते हैं। यह (अपनी ओर इशारा करते) दादा भगवान नहीं, भीतर प्रकट हुआ है, चौदह लोक का नाथ प्रकट हुआ है, मैं भी उस भगवान को नमस्कार करता हूँ और दिस इस द केश बैन्क, बोलने के साथ ही तुरंत फल देनेवाला है।

प्रश्नकर्ता : ये सभी दादा भगवान का कीर्तन करते थे, तब आप भी कुछ बोलकर कीर्तन करते थे, वह किसका?

दादाश्री : मैं भी बोलता था न! मैं दादा भगवान को नमस्कार करता हूँ। भगवान की तीन सौ साठ डिग्री है, मेरी तीन सौ छप्पन डिग्री है। मेरी चार डिग्री कम है। इसलिए मैंने पहले बोलने की शुरूआत की ताकि सभी बोलें, उनकी भी डिग्री कम है। आपकी डिग्री कम नहीं क्या?

मुक्ति तो सीमंधर स्वामी के दर्शन से ही

प्रश्नकर्ता : आप जिसे दादा भगवान पुकारते हैं और ये सीमंधर स्वामी, इन दोनों का क्या संबंध है?

ज्ञानी पुरुष किसे कहलाये? जो निरंतर अप्रयत्न दशा में होते हैं उसे।

दादाश्री : अहो! अहो! वे तो एक ही हैं। मगर सीमंधर स्वामी दिखलाने कि वज़ह यह है कि मैं अभी देह के साथ हूँ, इसलिए मुझे वहाँ जाने की ज़रूरत है। क्योंकि जब तक सीमंधर स्वामी के दर्शन नहीं होते, तब तक मुक्त नहीं हो सकते। एक अवतार शेष रहे। मुक्ति तो जो मुक्त हुए हैं, उनके दर्शन से ही होती है। मुक्त तो मैं भी हुआ हूँ मगर वे संपूर्ण मुक्त हैं।

हमारा ज्ञान तीन सौ छप्पन डिग्री का है। हमें दूसरी चार बढ़ाने वहाँ जाना पड़े। हम हमारे पास जितना है उतना दे सकें। उससे ज्यादा दूसरा ज्ञान लेने को नहीं रहता। ज्ञान तो संपूर्ण दे ही दिया है, लेकिन उनके दर्शन करने से ही, उस मूर्ति को देखने से ही हम उनके समान हो जायें, बस! यानी केवल उनके दर्शन ही शेष रहे।

ज्ञानी तो कौन कहलाये?

प्रश्नकर्ता : आपने बताया कि हम ज्ञानी पुरुष हैं तो ज्ञानी किसे कहें?

दादाश्री : जहाँ कायम प्रकाश होता है। जो सब जानते हों, कुछ जानना शेष नहीं रहा हो। ज्ञानी माने उजियारा, उजियारा माने किसी प्रकार का अंधियारा ही नहीं होता।

ज्ञानी कभी, किसी एकाध बार ही वर्ल्ड में होते हैं। ज्ञानी होना वह नैचुरल एडजस्टमैन्ट है। ज्ञानी, कोई खुद, अपने आप नहीं हो सकता। ज्ञानी पुरुष तो छूट गये (बंधनमुक्त) होते हैं, मुक्त होते हैं, अजोड़ होते हैं। कोई उनकी स्पर्धा नहीं कर सकता। क्योंकि जो स्पर्धा में हो वह ज्ञानी नहीं। जो सत् के अनुभव में ही रहते हैं ऐसे ज्ञानी पुरुष, वह तो कभी किसी बार ही ज्ञानावतार होते हैं, वरना ऐसे होते नहीं। इसलिए उनको दुर्लभ, दुर्लभ, दुर्लभ कहा है।

ज्ञानी पुरुष की पहचान

प्रश्नकर्ता : ज्ञानी पुरुष को कैसे पहचानें?

दादाश्री : उनका प्रत्येक शब्द शास्त्ररूप होता है। यदि समझ में आये तो, उनकी वाणी-वर्तन और विनय मनोहारी होते हैं, मन का हरण करे ऐसे होते हैं। यानी बहुत सारे लक्षण होते हैं।

ज्ञानी पुरुष में बुद्धि की एक बुंद भी नहीं होती है। वे अबुध होते हैं। अब बुंदमात्र भी बुद्धि

'ज्ञानी की कृपा' मोक्ष में ले जाये और 'भगवान की कृपा' सांसारिक भौतिक सुख दे।

नहीं हो ऐसे कितने होंगे? कभी-कभार उनका जन्म होता है, और लोगों का वहाँ कल्याण हो जाये, वहाँ लाखों मनुष्य तैरकर पार निकल जायें। ज्ञानी पुरुष बगैर अहंकार के होते हैं, उनमें ज़रा-सा भी अहंकार नहीं होता। अब इस दुनिया में अहंकार रहित मनुष्य तो कोई होता ही नहीं। अकेले ज्ञानी पुरुष ही अहंकार रहित होते हैं। सेन्ट (एक प्रतिशत) अहंकार भी नहीं होता। देह के मालिक नहीं होते, वाणी के मालिक नहीं होते, मन के मालिक नहीं होते। ऐसी बात तो दुनिया में कहीं सुनने में ही नहीं आयी होती। बाक़ी यह सब शास्त्रों में नहीं लिखा है। हमारे में बुद्धि नहीं है, इसलिए हमारी बात का प्रत्येक शब्द सुनने योग्य होता है और तभी वह बात कम्पलीट हंड्रेड परसेन्ट (पूर्ण सौ प्रतिशत) की होती है। हमारी यह बात हजारों साल तक कोई मिटा नहीं सकता। यहाँ पर सारे वर्ल्ड का सायन्स है, तमाम शास्त्रों का सायन्स है। सारे जगत के सभी शास्त्रों का खुलासा आपको यहाँ मिलेगा। अकेला वेदान्त नहीं, अकेली भगवद्गीता नहीं, लेकिन मुसलमानों के, जैनों के, सभी के शास्त्रों का खुलासा एक साथ होने पर सही बात मालूम पड़ती है।

ज्ञानी पुरुष तो हजारों सालों में एकाध होते हैं। बाकी संतो-शास्त्रज्ञानीओं तो बहुत होते हैं। जो आत्मा के ज्ञानी होते हैं न, वे तो परम सुखी होते हैं और दु:ख किंचित्मात्र नहीं होता, इसलिए वहाँ हमारा कल्याण होता है। जो खुद अपना कल्याण करके बैठे होते हैं, वे दूसरों का कल्याण करें।

ज्ञानी पुरुष निमित्त हैं, इसलिए वे कर्ता नहीं हैं। इसलिए सबकुछ कर सकते हैं। खुद कर्ता नहीं है। निमित्त भाव से चाहे सो करें।

भगवान, ज्ञानी के वश में

ज्ञानी पुरुष तो वर्ल्ड का अजूबा कहलाये। वे तो भगवान के मालिक कहलाये।

प्रश्नकर्ता : मगर वे भगवान के मालिक कैसे कहलायें? किस अर्थ में?

दादाश्री : भगवान उनके वश में हैं, इसलिए भगवान के मालिक हैं। उनके कहे अनुसार भगवान चलें।

भीतर जो दादा भगवान बैठे हैं, वे मेरे भी भगवान हैं। पर वे मालिकीपन का इनकार करते हैं, 'आप मेरे मालिक'। मैंने पूछा, 'ऐसा क्यों?' तब कहने लगे कि, 'आपने बहुत दिनों तक मालिक के रूप में मेरी भजना की है। इसलिए अब मुझे आपको मालिक के तौर पर रखना है कि आप इन लोगों का कल्याण करें।' मैंने कहा, 'आप कल्याण कीजिये न?' तब कहते हैं, 'मुझ से कल्याण कैसे हो सकता है? मेरी तो वाणी नहीं है, कुछ भी नहीं है।' यानी भगवान ने हमें मालिक का दर्जा खुद दिया है। उन्होंने कहा कि, 'हम पात्र की खोज़ में थे, जो हमें आप में दिखाई दिया है। हम तो अब संपूर्ण वीतराग होकर मोक्ष में बैठे हैं। अब हम किसी का कुछ सँवार नहीं सकते। इसलिए आप प्रकट स्वरूप

जिसकी सर्व प्रकार की भीख मिटे, उसे 'ज्ञानी' पद मिले।

में सर्वशक्तिमान हैं। देहधारी होने पर भी संपूर्ण वीतराग हैं। इसलिए हम आपको हमारा भी मालिकीपन प्रदान करते हैं! आप जगत का कल्याण कीजिए। इसलिए हम भगवान के भी मालिक हुए हैं। चौदह लोक के नाथ के हम आज मालिक हैं। सर्व सिद्धि सहित यह ज्ञानावतार प्रकट हुआ है। अब ज्यादा सोच विचार मत कर। ज्ञानी के पास अपना दीया जलाकर चलता बन!

इतना अंतर, ज्ञानी और भगवान में

प्रश्नकर्ता : आप में 'ज्ञानी' कौन और 'दादा भगवान' कौन, यह समझ में नहीं आता है।

दादाश्री : ज्ञान के वाक्य जो बोल रहे हैं वे व्यवहार में 'ज्ञानी' कहलायें और भीतर जो प्रकट हुए हैं वे 'दादा भगवान' है। उनके बगैर ज्ञानवाक्य नहीं निकलते। हमें भी वह पद प्राप्त करना है, इसलिए हम भी 'दादा भगवान' को नमस्कार करते हैं।

ज्ञानी में और भगवान में इतना अंतर है कि ज्ञानी समझ सकें, सबकुछ देख सकें, जान नहीं सकते।

प्रश्नकर्ता : आप तो आत्मा हैं तब फिर आप में ज्ञानी का हिस्सा कौन-सा?

दादाश्री : जितना हिस्सा आत्मा हुआ उतना यह ज्ञानी। तीन सौ छप्पन का आत्मा हुआ उतना तीन सौ छप्पन जितना हिस्सा ज्ञानी। आत्मा ज्ञानी ही है लेकिन उसका आवरण हटना चाहिए। जितना आवरण हटा, तीन सौ साठ डिग्री तक हट गया तो संपूर्ण हो गया। तीन सौ छप्पन तक हटा मतलब चार डिग्री का आवरण है। आपको अधिक डिग्री का आवरण है। धीरे-धीरे आपका आवरण टूटता जायेगा। आवरण टूटने पर ज्ञानी ही है खुद। आवरण को लेकर अज्ञानी दिखाई देता है।

तीन सौ छप्पन डिग्री अंतरात्मा की और तीन सौ साठ परमात्मा की। यह ज्ञान पाने के बाद आप भी अंतरात्मा हैं और हम भी अंतरात्मा हैं। हमारी डिग्री तीन सौ छप्पन है।

प्रश्नकर्ता : दर्शन में तीन सौ साठ डिग्री है, ज्ञान में नहीं आती इसलिए ही ऐसा है न?

दादाश्री : मगर उसे संपूर्ण पद नहीं गिना जाता। फिर भी श्रीमद् राजचंद्रजी ने खुले दिल से कहा कि, 'ज्ञानी पुरुष देहधारी परमात्मा ही हैं।' ऐसा क्यों कहा? मतलब उनकी आबरू बढ़ाने नहीं, उनके पीछे पड़ेंगे तो आपका काम होगा, वर्ना काम नहीं होगा। देहधारी परमात्मा के प्रागट्य के सिवा कभी काम नहीं होता। देहधारी के रूप में ज्ञानी परमात्मा ही हैं।

भगवान श्री कृष्ण ने कहा कि, 'ज्ञानी वही मेरा प्रत्यक्ष आत्मा है।' ज्ञानी तो अपने पापकर्मों को भस्म कर दें और सामनेवाले के पापों को भी भस्म कर दें। ऐसे ज्ञानी पुरुष 'हम' खुद हैं।

जगत पूर्ण देखा पर जाना नहीं

हम केवलज्ञान में अनुत्तीर्ण हुए मनुष्य हैं। हमने आपकी, हमारी और केवली भगवान के बीच

'ज्ञानी पुरुष' की करुणा 'वर्ल्डवाइड' होती है, जीवमात्र पर होती है।

में बहुत फर्क नहीं रखा है। काल को लेकर हमें केवलज्ञान रूका है, इसलिए चार डिग्री पाचन नहीं हुआ, तीन सौ छप्पन पर रूका है। लेकिन हम आपको संपूर्ण केवलज्ञान देते हैं।

प्रश्नकर्ता : जो शेष चार अंश रहे वह क्या है?

दादाश्री : यह जो दिखाई देता है, यह जो चारित्रमोह आपको दिखता है, वह चाहे मुझे उसकी मूर्च्छा नहीं हो फिर भी सामनेवाले को दिखता है इसलिए उतने अंश कम हो जाते हैं और दूसरा मुझे जगत समझ में अवश्य आता है पर जानने में नहीं आया है अभी। केवलज्ञान मतलब जानने में आना चाहिए। यह तो समझने में आ गया है।

प्रश्नकर्ता : 'यह जाना नहीं लेकिन समझ में आया है', यह मेरी समझ में नहीं आया?

दादाश्री : समझ में मतलब यह जगत क्या है? कैसे उत्पन्न हुआ? मन क्या है? मन के माता-पिता कौन हैं? यह बुद्धि क्या है? यह चित्त क्या है? अहंकार क्या है? मनुष्य का जन्म क्यों होता है? यह सब कैसे चलता है? कौन चलाता है? भगवान चलाते हैं कि अन्य कोई चलाता है? मैं कौन हूँ? आप कौन हैं? वे सारी की सारी बातें हमारी समझ में आ गई है। दिव्यचक्षु से आत्मा हर जगह दिखाई देता है, प्रत्येक जीव में दिखाई देता है। मतलब सब समझ में आ गया होता है, इसलिए हम उसे केवलदर्शन कहते हैं?

प्रश्नकर्ता : बिना 'केवलज्ञान' के 'केवलदर्शन' हो सकता है?

दादाश्री : क्रमिकमार्ग में बिना 'केवलज्ञान' के 'केवलदर्शन' नहीं होता। अक्रममार्ग में 'केवलदर्शन' होने के बाद 'केवलज्ञान' होने में थोड़ा समय लगता है। ये सब बुद्धि के विषय नहीं हैं, यह ज्ञान का विषय है।

ज्ञानी की करुणा

यह तीन भेद 'मैं', 'ज्ञानी' और 'अंबालाल' किये है, उसके पीछे करुणा है कि यहाँ पहुँचा हुआ फिर से भटक न जाए। मगर भेद तो वास्तव में दो ही है, 'दादा भगवान' और 'अंबालाल'। मगर तीन करने का क्या कारण है कि आज के दुषमकाल के ये जीव हैं और शंकाशील हैं। बिना वजह की शंकाओं से उलटे बिगड़े। इसलिए तीनों को अलग किया ताकि शंका पैदा नहीं हो।

यह तो इससे उनको ठंडक रहे। हाँ, अब उनका पागलपन खड़ा नहीं हो इसलिए। वास्तव में ये दो ही है। कृपालुदेव ने तो कहा है, 'ज्ञानी पुरुष वही देहधारी परमात्मा हैं।'

यह रिलेटिव है और रिअल में शुद्ध विज्ञान है। हम दोनों तरफ हैं। एक विज्ञान स्वरूप है और दूसरा स्वरूप वह 'ज्ञान स्वरूप' है। ज्ञान रिलेटिव है और वह रिअल 'विज्ञान स्वरूप' है। यह हमारा

'ज्ञानी' तो साधन स्वरूप हैं, साध्य विज्ञान स्वरूप 'आत्मा' है।

रिलेटिव बंद हुआ मतलब वह (रिअल) संपूर्ण हो गया। रिलेटिव एक-दो अवतार में बंद हो जायेगा तब वह (रिअल) पूर्ण हो जायेगा। मतलब 'हम' विज्ञान स्वरूप ही हैं मगर इस समय 'ज्ञान स्वरूप' हैं।

विज्ञानघन आत्मा

ज्ञान मतलब आत्मा और विज्ञान मतलब परमात्मा। यह तो 'सायन्स' है। आत्मा-परमात्मा का 'सायन्स' मतलब सिद्धांत। उसमें किसी जगह अंशमात्र भी चेन्ज नहीं हो और आखिर तक आरपार निकाल दे। ज्ञानघन आत्मा में आने के बाद, अविनाशी पद की प्राप्ति के बाद, विज्ञानघन जानना चाहिए। विज्ञानघन यानी सभी में 'मैं ही हूँ' ऐसा दिखाई दे वह विज्ञानघन आत्मा कहलाये। बंधा हुआ होने पर भी मुक्त रहे। 'ज्ञानी पुरुष' विज्ञानघन आत्मा होते हैं। 'थ्योरी ऑफ एब्सोल्युटिझम में ही नहीं लेकिन खुद थ्योरम ऑफ एब्सोल्युटिझम' में होते हैं। सारे संसार का पुण्योदय हुआ कि यह 'अक्रम विज्ञान' निकला, विज्ञानघन आत्मा निकला!

ज्ञानीकृपा से ही प्राप्ति

प्रश्नकर्ता : आपने जो अक्रममार्ग कहा वह आपके जैसे ज्ञानी के लिए सही है, आसान है लेकिन संसार में रहकर काम करनेवाले हमारे जैसे आम लोगों के लिए कठिन है। तो इसका क्या उपाय है?

दादाश्री : 'ज्ञानी पुरुष', जिनके भीतर भगवान प्रकट हो गये हों, चौदह लोक के नाथ प्रकट हुए हों, ऐसे 'ज्ञानी पुरुष' मिल जायें तो बाकी क्या रह गया? आपकी शक्ति से नहीं करना है, उनकी कृपा से होनेवाला है। कृपा से सारा परिवर्तन हो जाये। इसलिए यहाँ तो आप जो माँगे, वह सारा प्राप्त हो जाये।

'ज्ञान' यदि अकेले ज्ञानी के पास रहे तो रसातल जाये। 'ज्ञान' तो प्रकट करना ही चाहिए। उजियाले का दीया कभी-कभार ही उत्पन्न होता है। तब तक घोर अंधियारा होता है। यह तो सूरत के स्टेशन पर 'सायन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडन्स' के आधार पर कुदरती रूप से उत्पन्न हुआ है। 'दीस इझ बट नैचुरल'। तो फिर उसमें से जितने दीये जलाना चाहें उतने जला सकते हैं। बाकी दीयों में घी तो सभी लोगों ने डालकर रखा है।

अक्रम की बलिहारी

प्रश्नकर्ता : कुछ भी किये बगैर यह प्राप्त होना, यह कुछ समझ में नहीं आ रहा, दादाजी।

दादाश्री : 'अक्रम विज्ञान' हमेशा ज्ञानी की कृपा से ही प्राप्त होता है। क्रमिक में भी ज्ञानी की कृपा तो सही ही मगर उसमें गुरु कहे वैसा करते रहना पड़ता है। 'अक्रम' में कर्तापद नहीं

'ज्ञानी' की कृपा से सब होता है, कृपा से 'आत्मज्ञान' होता है।

होता। यहाँ तो सीधा ज्ञान ही, 'डिरेक्ट' ज्ञान मिलता है। इसलिए बहुत सरल हो जाये। इसलिए इसे 'लिफ्टमार्ग' कहा। 'लिफ्टमार्ग' यानी मेहनत आदि कुछ नहीं करना, आज्ञा में रहना ताकि नया 'चार्ज' नहीं होता। फिर आपका विसर्जन ही होता रहे। जिस भाव से सर्जन हुआ था, उसी भाव से विसर्जन होता रहे।

यह सभी के लिए नहीं होता। यह तो महापुण्यवंतों के लिए है। यह 'अक्रम ज्ञान' खड़ा हुआ, उसमें लोगों की कुछ पुण्याई तो होगी न? यह तो बहुत पुण्यवंतों के लिए है। यह 'दादाजी' की और उनके महात्माओं की हवा से ही जगतकल्याण हो जायेगा।

संसारी भेस में वीतराग

भगवान महावीर तक दस आश्चर्य हुए और यह ग्यारहवाँ आश्चर्य है। ज्ञानी पुरुष व्यापारी के रूप में वीतराग हैं, व्यापारी भाव में वीतराग हैं। ऐसा दर्शन होना अजूबा कहलाये! देखिये न, यह हमारा कोट और टोपी! ऐसा तो कहीं होता होगा ज्ञानी में? उनको परिग्रह की क्या ज़रूरत? जिसे कुछ नहीं चाहिए फिर भी परिग्रह में फँसे हैं। फिर भी हैं अंतिम दशा में। मगर लोगों के नसीब में नहीं होगा, इसलिए यह संसारी भेस में हैं। यदि त्यागी भेस में होते तब तो लाखों-करोडों मनुष्यों का काम हो जाता। मगर लोगों के पुण्य ऐसे कच्चे हैं!

कलियुग में दर्शन वीतराग के

प्रश्नकर्ता : वीतराग कौन हो सकता है और वीतराग दशा कैसी होती है, इसका वर्णन शास्त्रों में पढ़ा था, पर देहधारी वीतराग देखने को नहीं मिले थे।

दादाश्री : नहीं मिलते। वीतराग के दर्शन तो दुर्लभ हैं। इस काल में मैं अनुत्तीर्ण हुआ हूँ। इसलिए आप सभी को दर्शन करना नसीब हुआ। वर्ना यह केवलज्ञान के थोड़े करीब पहुँचे हुए के दर्शन करने

निज बुद्धि से यदि ज्ञानी की बात समझ में नहीं आती तो समझना कि उतना आड़ापन मेरे में पड़ा हुआ है।

को भी नहीं मिले। यह तो दर्शन करने को मिले, इसलिए वीतरागता का वर्णन समझ सकें कि वीतरागता कैसी होती है! और हम वैसे रहते हैं!

सदा बर्तें कल्याण की भावना के अनुसार

प्रश्नकर्ता : आप जैसे वीतराग का लोकसंपर्क से क्या संबंध है?

दादाश्री : वीतराग भाव, अन्य कोई संबंध नहीं है। पर वह तो इस समय (पूर्ण) वीतराग है ही नहीं न! आप जिसे पूछ रहे हैं वे इस समय (पूर्ण) वीतराग नहीं है। इस समय तो हम खटपटिया वीतराग हैं। खटपटिया मतलब क्या कि जगत का कल्याण हो और कल्याण हेतु खटपट (कार्य) करे। बाकी वीतराग को और जनसंपर्क को कोई लेना-देना ही नहीं है। वीतराग तो केवल दर्शन दिया करते हैं। दूसरी कोई खटपट या और कुछ नहीं करते।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वीतराग जो लोकसंपर्क करते हैं वह अपने कर्म खपाने करते हैं क्या?

दादाश्री : खुद का हिसाब पूरा करने के लिए, औरों के लिए नहीं। उनको दूसरी भावना नहीं है। हमारी भावना है कि लोगों का कल्याण हो। जैसा हमारा कल्याण हुआ है ऐसा इन सभी का कल्याण हो, ऐसी हमारी भावना होती है। पूर्ण वीतराग को ऐसा नहीं होता। बिलकुल भावना नहीं, संपूर्ण वीतराग। और हमारी तो एक तरह की भावना है। फिर सुबह उठकर जल्दी से बैठ जाते हैं न, आराम से। (सत्संग की) स्कूल चालू कर देते हैं न! और रात साढ़े ग्यारह बजे तक सत्संग होता है। मतलब वह भावना है हमारी। क्योंकि हमारे जैसा सुख हरएक को हो। इतने सारे दु:ख क्यों है? दु:ख है नहीं और बिना वजह इतने दु:ख भुगत रहे हैं। यदि नासमझी निकल जाये तो दु:ख नहीं रहे। अब यह नासमझी कब निकले? कहने से नहीं निकलती, दिखाने पर निकले। आप करके दिखायें तो निकले। इसलिए हम करके दिखाते हैं। वह मूर्त स्वरूप कहलाये। वह श्रद्धा की मूर्ति कहलाये।

प्रश्नकर्ता : इसलिए आप कहते हैं कि हम खटपटिया वीतराग हैं?

दादाश्री : हाँ, तब और क्या कहलाये? खटपटिया सही मगर वीतराग हैं। कोई खटपटिया खोज लाइए, यदि वीतराग रहा तो। कभी ऐसा नहीं हुआ कि सत्संग साढ़े ग्यारह से पहले पूरा हुआ हो। इसलिए हमें किसी बात का आश्चर्य नहीं होता है न? और फिर तीन या साढ़े तीन बजे उठते है। इसके बाद डेढ़ घंटा पद्मासन लगाकर बैठ जाते है और फोरिन आदि सब जगह घूम आते है (लोगों के कल्याण के लिए प्रार्थना करते है)। फिर थोड़ी देर के लिए सो जाते है। साढ़े पांच-छह होने पर आधा घंटा सो जाते हैं। मगर शरीर पीड़ा नहीं करता, कुछ नहीं करता।

ध्येय हमारा, जग कल्याण का

लोग किस तरह शांति पायें, यह एक सर्वस्व ध्येय निश्चित किया है, केवल इतनी इच्छा है, दूसरी

कर्तापद की भ्रांति खुद से नहीं टूटती। अकेले 'ज्ञानी पुरुष' ही उसे तोड़ देते हैं।

कोई इच्छा नहीं है। मैं इसके लिए रोज़ाना ग्यारह घंटे सत्संग करता हूँ।

'दादाजी की जंजीर' (ज्ञानरूपी) खींचे उसका काम हो जाये। क्योंकि इस काल में पूर्ण वीतराग होते नहीं हैं लेकिन तमाम जीवों के लिए हम तो संपूर्ण वीतराग ही हैं। केवल हमारे कर्मों के साथ ही हमें राग रहता है। थोड़ा-सा राग शेष रहा है वह भी जगत कल्याण हेतु खटपट के लिए और वह नुकसानदेह नहीं होता न? यह इसे भी राग कहलाये। हमें गरज़ थी जो वहां से उठकर यहाँ आये।

हमारे अभी एक-दो अवतार शेष रहे हैं इसलिए खटपटिया वीतराग होते हैं। हम कहें, 'उस भाई को यहाँ ले आना ज़रा, ऐसा करना, वैसा करना।' और उन वीतरागों को तो कुछ भी नहीं होता।

उनके दर्शन से ही हमारा कल्याण हो जाये। सच्चे दर्शन करना आना चाहिए। जैसा जिसको आया वैसा उसको लाभ। बस, वही वीतराग, पर उनकी वीतरागता जिसने पहचानी, फिर वीतरागता उसकी। जितनी-जितनी पहचानी उतना उसका लाभ। वे खुद ऐसी बाबत में हस्तक्षेप नहीं करते। वाणी सहज भाव से निकलती रहे, बस। इसलिए वे खटपटिये नहीं। हम खटपटिये क्योंकि हम जानते हैं कि हमारा यह अंतिम अवतार नहीं है। इसलिए हम से यह सब यहाँ पर बोला जाये। और वे ऐसा नहीं बोलते कि, आपका कोई मालिक नहीं है या आप में कोई उँगली कर सके ऐसा नहीं है। ऐसा वे नहीं बोलते, क्योंकि उनको तो ऐसा होता है कि जो मोक्ष में जानेवाले हों वे दर्शन पायें और नहीं जानेवाले हो वे नहीं पाये। और हमें अभी इतना आग्रह होता है। हम अभी खटपट किया करें।

खटपट के पीछे है करुणा

प्रश्नकर्ता : आप में वह करुणाभाव प्रकट हुआ है?

दादाश्री : हाँ, करुणाभाव। लेकिन वह भी जो है, उसमें खटपट तो है न? करुणाभाव तो तीर्थंकरों में भी है लेकिन वे एक अक्षर भी नहीं बोलते। कोई कहीं गड्ढे में गिरता हो तब भी नहीं बोलते। खुद ज्ञान में देखे मगर कुछ नहीं बोले। कोई सीधा होने पर उसे सबकुछ दें। और टेढ़ा होने पर कुछ नहीं बोलते। हम तो कोई टेढ़ा होने पर कहें, 'भैया, क्यों टेढ़ा होता है?' क्यों? इसमें हमें क्या लालच है? हमारे मन में एक इच्छा है कि हमारे जैसा सुख इन सभी को बरते। इन दुःखों से बचे। ज़रा-सी भी ऐसी इच्छा है न? वह खटपट ही है न? यह खटपट नहीं कहलाये क्या? हम से लोग पूछते हैं न, 'आप वीतराग हैं?' तब मैं कहता हूँ, 'हम खटपटिये वीतराग हैं।' महावीर भगवान पूर्ण वीतराग थे। यानी जितना उदय में हो उतना ही करें, मगर हमारा उदय खटपट मिश्रित होता है और भगवान का उदय खटपट मिश्रित नहीं होता है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, जी। खटपटिये वीतराग के बारे में अब समझ में आया।

दादाश्री : हाँ, खटपटिये नहीं होते तो गाड़ी कैसे चलती? जलेबी खिलाकर भी वीतराग बनायें।

संसार भुलायें, उसका नाम 'ज्ञानी'।

सब खायें-पीयें-मज़े उड़ाइये और वीतराग होइये। कैसा सरल रास्ता! सरल मार्ग पर रखकर वीतराग बनायें।

हाँ, खटपट नहीं होती तो चलता नहीं न? और आज के लोग बिना खटपट के इकट्ठा नहीं होते। यदि संपूर्ण वीतरागता होती तो मुझ से कोई मिलता ही नहीं।

निरालंब दशा, 'ज्ञानी' की

प्रश्नकर्ता : आपकी यह दशा है, हम देखते हैं, पर हमें कुछ ख्याल नहीं आता। परम ज्ञान की भीतर जो दशा होती है वह दशा कैसी होती है?

दादाश्री : हाँ, वह दशा हम ही जानें। मैं (आत्म) समाधि से बाहर निकलता ही नहीं। इस समय भी मेरी (आत्म) समाधि निरंतर चलती रहती है। यह अंबालाल पटेल जो मैं नहीं हूँ, यह अहंकार जो मैं नहीं हूँ, यह चित्त जो मैं नहीं हूँ। सभी चीजों के पार मैं हूँ। यह शुद्धात्मा भी मैं नहीं हूँ। शुद्धात्मा तो ये लोग हुए हैं। मैं तो शब्दरूप भी नहीं हूँ। मैं दरअसल स्वरूप में हूँ, निरालंब स्वरूप में हूँ मगर चार डिग्री अभी कम है। जो मेरी पूरी नहीं हुई है, तब तक मेरी इच्छा क्या है? यह जो सुख मैंने पाया है वही सुख लोग पायें, इतनी इच्छा रही है।

इसलिए केवलज्ञान में अनुत्तीर्ण हुए!

ज्ञानी के दो प्रकार : एक शुद्धात्मा स्वरूप प्राप्त किया हो और उसके अनुभव में रहते हों वे। लेकिन शुद्धात्मा स्वरूप वह शब्दावलंबी है और दूसरे प्रकार के ज्ञानी निरालंब होते हैं। तीर्थंकर निरालंब होते हैं। इसके बावजूद हम भी निरालंब में हैं। हमारा शुद्धात्मा स्वरूप शब्द में नहीं है, हम निरालंब आत्मा में हैं। जिसका कोई अवलंबन ही नहीं है। वह अवलंबन शब्द का है और यह निरालंब है। यह तो ग्यारहवाँ आश्चर्य है।

ज्ञानी पुरुष खुद 'एब्सोल्युट' हुए है, उनको आधार-आधारी संबंध नहीं रहा। जगत कल्याण की हमारी यह भावना भले ही हो मगर खुद तो एब्सोल्युट हो गये हैं। एब्सोल्युट माने निरालंब। किसी अवलंबन की उसे ज़रुरत नहीं। स्वतंत्र, केवल ही, दूसरा कोई मिक्सचर (मिलावट) नहीं।

हम निरालंब स्वरूप हुए हैं, इसलिए जगत की कोई चीज़ हमें छूती नहीं, बाधक भी नहीं होती। यानी उस स्थिति में हम स्थित हैं, निरालंब। उस स्थिति के कारण हमारा किसी जगह मतभेद नहीं होता, कुछ भी नहीं होता! क्योंकि कोई अवलंबन ही छूता नहीं न! हमारी दशा निरालंब!! इसलिए हम समझ सकें कि इस दशा में भी यदि हम निरालंब रह सकते हैं तो वीतराग कैसे निरालंब रहते होंगे?

हम बिलकुल निरालंब होते हैं। जिन्हें शब्द का भी अवलंबन नहीं है, शुद्धात्मा जो शब्द है, उसका

'ज्ञानी पुरुष' का 'शुद्ध प्रेम' जो घटे-बढ़े नहीं, एक समान ही रहा करे, उसका नाम परमात्मा।

भी अवलंबन जिन्हें नहीं है, निरालंब परिस्थिति है। फिर भी सब के साथ रहता हूँ, खाता हूँ, पीता हूँ, चलता है, फिरता हूँ, सबकुछ है। यह देह होने पर भी हम निरालंब स्थिति को देख सकें और अनुभव कर सकते हैं और बंधन स्थिति का भी अनुभव करते हैं। दोनों स्थितियों का अनुभव कर सकते हैं। अंतिम बात, निरालंब। तभी मोक्ष कहलाये। यह अक्रम विज्ञान ऐसा है कि निरालंब हुआ जा सकता है। इसलिए जिस-जिस की भावना हो, वे हो सकते हैं।

बर्ते ज्ञानी, निरंतर स्वपरिणति में

प्रश्नकर्ता : दादाजी, आपको जब भी देखते हैं तब आप मुक्त ही लगते हैं, 'मूड' में ही लगते हैं, इसका क्या कारण है?

दादाश्री : हम क्षणभर के लिए भी परपरिणति में नहीं रहते, स्वपरिणति में ही होते हैं। यदि एक घंटा ही मुझे परपरिणति उत्पन्न हो तो मेरे चेहरे पर आपको फेरफार दिखाई दे। ज्ञानी को परपरिणति नहीं होती है। सारे 'वर्ल्ड' का यह अजूबा है कि वे निरंतर स्वपरिणति में रहते हैं। एक क्षण के लिए भी यदि कोई स्वपरिणति में आ गया तो शास्त्रकारों ने उसे बहुत बड़ा दर्जा दिया है। कृपालुदेव ने कहा कि, 'ज्ञानी पुरुष वे देहधारी परमात्मा हैं।' इसलिए तो कहा कि, 'अन्यत्र कहाँ खोजते हो, देहधारी रूप में आये हों ऐसे ज्ञानी पुरुष को खोजिए।' देहधारी परमात्मा कौन कहलाये? जिसे परपरिणति ही नहीं हो, निरंतर स्वपरिणति ही होती हो उसे।

निरंतर स्वभाव परिणति होती है। रात में, दिन में स्वपरिणति होती है, कभी भी परपरिणति नहीं होती। जिनकी वाणी, वर्तन, विनय मनोहारी होते हैं। आर्तध्यान, रौद्रध्यान सर्वांश नहीं होते और अहंकार शून्य होने से, टेन्शन नहीं होने पर मुक्त हास्य निरंतर रहता है। वे अनंत गुणों के भंडार होते हैं।

'दादा' की निरंतर एक ही परिणति होती है, निरंतर आत्मरमणता और परमानंद में ही होते हैं।

प्योरिटी, ज्ञानी की

यदि मैं लोगों से पैसे लूँ तो लोग तो मूझे चाहूँ उतने पैसे दें मगर मैं पैसों का क्या करूँ? क्योंकि उन सारी भीखों के जाने के बाद तो मुझे यह ज्ञानी का पद मिला है।

मैं तो अपने घर का, मेरे अपनी आमदनी का खाता हूँ और कपड़े पहनता हूँ। मैं किसी से पैसा तक नहीं लेता हूँ और न ही किसी का दिया पहनता हूँ। यह धोती भी मैं मेरी कमाई की पहनता हूँ। यहाँ से मुंबई जाने का प्लेन का किराया मेरे घर के पैसों का! फिर दूसरों के पैसों की ज़रूरत ही कहाँ रही? मैं से यदि लोगों एक पैसा भी लूँ तो मेरे शब्द लोगों के मानने में ही कैसे आयें फिर? मतलब मेरा कहना है कि जितनी शुद्धता रखेंगे उतना यह जगत को लाभदायी हो सकेगा।

जगत बाधक नहीं है, तेरी अज्ञानता बाधक है।
अज्ञान 'ज्ञानी पुरुष' के ज्ञान देने पर जाये।

'ज्ञानी शरण' में सर्व दुःखों से मुक्ति

मैं इस दुनिया के दुःख को लेने आया हूँ। आपके सुख अपने पास रहने दीजिये। उसमें आपको कोई बाधा तो नहीं न? आप जैसे यहाँ पैसे धरें तो उन पैसों का मैं क्या करूँ? मैं तो दुःख लेने आया हूँ। आपके पैसे अपने पास रहने दीजिये, वे आपके काम आयेंगे। जहाँ ज्ञानी होते हैं, वहाँ पैसों का लेन-देन नहीं होता। ज्ञानी तो उलटे आपके सारे दुःख को दूर करने आये होते हैं, वे दुःख खड़े करने नहीं आये होते हैं।

आपके दुःख मुझे सौंप दीजिये। यदि आपका विश्वास रहा तो वे दोबारा आपके पास नहीं आयेंगे। मुझे सौंपने के बाद आपका विश्वास टूटा तो आपके पास वापस लौट आयेंगे। यानी आपको कोई दुःख हो तो मुझे बताना कि, 'दादाजी, मुझे इतने दुःख हैं, उन्हें मैं आपको सौंप देता हूँ।' मैं उनको ले लूँगा ताकि निबटारा हो जाये, वर्ना निबटारा कैसे होगा?

हम क्या कहते है कि सर्व दुःखों का क्षय कीजिए। ये दुःख हम से देखे नहीं जाते। फिर भी हमें 'इमोशनल'पन नहीं होता। साथ-साथ उतने वीतराग भी हैं। फिर भी सामनेवालों का दुःख हम से सहन नहीं हो सकता, क्योंकि हमें आपकी सहनशक्ति का अंदाजा है। हम से दुःख कैसा सहन होता था यह हम जानते हैं न? इसलिए लोगों पर क्या बितती होगी इसका हमें ख्याल है और वही हमारी करुणा है।

ये दादा अकेले आपके होंगे। सुख में-दुःख में जब देखो तब अकेले दादा ही आपके होंगे। बाकी कोई आपका होनेवाला नहीं है, इसकी गारन्टी देता हूँ।

आदर्श व्यवहार सदा, ज्ञानी का

'ज्ञानी पुरुष' का स्व-पर का विवेक तो बहुत उँचे दर्जे का होता है। हमारा व्यवहार आदर्श होता है। हम संसारी रूप में हैं फिर भी हमारा पडोसी के साथ का व्यवहार बहुत आदर्श होता है। आदर्श यानी भगवान ने बताया है ऐसा व्यवहार होता है। भगवान के बताये में लेशमात्र फेरफार नहीं होता। हमारा केवल इन कपडों को छोडकर दूसरा कोई फेरफार नहीं होता। जहाँ आदर्श व्यवहार होता है, वहाँ सारे काम होते हैं। व्यवहार आदर्श हुए बगैर कभी निश्चय आदर्श नहीं होता है।

'ज्ञानी पुरुष' व्यवहार में किसी जगह कच्चे नहीं पड़ते, लौकिक में भी एक्झेक्ट ड्रामा करते हैं। ड्रामें में भी कहीं चूक नहीं हो उसका नाम ज्ञानी। जहाँ, जिस समय, जो ड्रामा करना हो, वह 'हम' संपूर्ण अभिनय के साथ करते हैं। हम जब काम पर जाते हैं वहाँ कहे कि, 'सेठ आये, सेठ आये।' वहाँ हम सेठ का ड्रामा करते हैं। ननिहाल में जायें तो वहाँ सभी कहें कि, 'भानजा आया', वहाँ हम

'ज्ञानी पुरुष' का निदिध्यासन वही साधन और उससे आत्मा प्रकट होता है।

भानजे का ड्रामा करें। रेलगाडी में हम से पूछे कि, 'आप कौन?' तब हम कहें कि, 'पेसेन्जर हैं'। यहाँ सत्संग में आने पर 'ज्ञानी पुरुष' का भेष अदा करते हैं और बारात में जायें तो बाराती हो जायें और स्मशान में जाये तो मसानिया हो जायें। फिर उस ड्रामे में फेरफार नहीं होता, अभिनय एक्झेक्ट होता है। ड्रामे में कच्चे पड़ें वे ज्ञानी नहीं होते।

यानी हमारा व्यवहार आदर्श ही होता है। जगत ने नहीं देखा हो ऐसा हमारा व्यवहार होता है। हमारा व्यवहार मनोहारी होता है। जिसका वर्तन भी मनोहारी हो, विनय भी मनोहारी होता है। व्यवहार को दूर रखकर कोई आत्मा प्राप्त नहीं कर पाया है।

यह विज्ञान व्यवहार को किंचित्‌मात्र दुतकारता नहीं है और अपनी संपूर्ण 'रिआलिटी' में रहते हुए व्यवहार को नहीं दुतकारता है। व्यवहार को दुतकारे नहीं वही सैद्धांतिक वस्तु होती है। यानी यह 'रिअल सायन्स' है, 'कम्प्लिट सायन्स' है।

लघुतम स्वरूप, ज्ञानी का

प्रश्नकर्ता : इसमें आप अपने को किस कोटि के मानते हैं?

दादाश्री : मैं अपनी जात को सारे जगत का शिष्य मानता हूँ और लघुतम स्वरूप हूँ। इसके अलावा मेरा कोई दूसरा स्वरूप नहीं है और 'दादा भगवान' वे तो भगवान हैं, वे जो भीतर प्रकट हुए हैं!

इस संसार में मुझ से कोई लघु नहीं है ऐसा मैं लघुतम पुरुष हूँ। यदि सब से छोटा हो जाये तब तो वह बहुत बड़ा भगवान हो जाये। फिर भी भगवान होना मुझे बोझ-सा लगता है, उलटे शरम लगती हैं। हमें वह पद नहीं चाहिए। किसलिए चाहिए वह पद? मैं ज्ञानी हूँ यह पद क्या कम है? और सारे जगत के शिष्य के रूप में ज्ञानी हूँ, लघुतम पुरुष हूँ। फिर इससे बड़ा पद कौन-सा? लघुतम पद, जहाँ से कभी गिर न जायें ऐसा बड़ा पद!

मतलब 'यह' (दादाजी) तो कौन है? लघुतम पुरुष। लघुतम पुरुष के दर्शन कहाँ होते हैं? ऐसे दर्शन ही नहीं होते! वर्ल्ड में एक मनुष्य ऐसा खोजकर लाइये जो लघुतम हो।

इस विज्ञान में तो 'दादाजी' आपके शिष्य होते हैं। इतने सारे लोगों को ज्ञान दिया, उन सभी का मैं शिष्य हूँ। मैं तो पूरे 'वर्ल्ड' का शिष्य हूँ। सारे 'वर्ल्ड' का मालिक कौन हो सकता है? जो सारे 'वर्ल्ड' का शिष्य नहीं हुआ वह सारे 'वर्ल्ड' का मालिक नहीं हो सकता।

गुरु तो सारे जगत को करने जैसा है। जहाँ से कुछ भी ज्ञान मिले वह हमें प्राप्त कर लेना चाहिए। हम सारे जगत के शिष्य होकर बैठे हैं।

प्रश्नकर्ता : दादाजी ने किसी को शिष्य बनाया है?

अज्ञानी की सहजता राग-द्वेष पूर्ण होती है। जबकि ज्ञानी की सहजता 'वीतराग' होती है।

दादाश्री : मैं सारी दुनिया का शिष्य होकर बैठा हूँ। मुझे इन शिष्यों का क्या करना है? कहाँ रखूँ फिर उन सभी को?

प्रश्नकर्ता : तो फिर आपके बाद क्या होगा? कोई शिष्य नहीं रहा तो फिर क्या होगा?

दादाश्री : कोई ज़रूरत ही नहीं है न! हमारा एक भी शिष्य नहीं हैं मगर हमारे पीछे रोनेवाले बहुत हैं।

प्रश्नकर्ता : मगर आपके बाद कौन?

दादाश्री : वह तो 'समय' ही बतलायेगा कि बाद में कौन? मैं तो कुछ जानता नहीं और ऐसा सोचने की फुरसत भी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : मेरे पीछे चालीस-पचास हजार रोनेवाले होंगे, मगर शिष्य एक भी नहीं होगा यानी आप क्या करना चाहते हैं?

दादाश्री : मेरा कोई शिष्य नहीं है। यह कुछ गद्दी नहीं है। गद्दी होने पर वारिस होता है। यह गद्दी हो तो लोग वारिस होने आयें न? जो सारे जगत का शिष्य होगा उसका काम होगा। यहाँ तो लोग जिसे 'एक्सेप्ट'(स्वीकार) करेंगे उसका चलेगा। फिर ज्ञानिओं की लिन्क (कड़ी) जुडती जायेगी। इसलिए सजीवन मूर्ति को खोजना। उसके बगैर हल निकले ऐसा नहीं है।

'मैं तो कुछ लोगों को अपने हाथों सिद्धि प्रदान करनेवाला हूँ। पीछे अनुगामी चाहिए कि नहीं चाहिए? पीछे लोगों को मार्ग तो चाहिए न?''

'लघुतम-गुरुतम' पद में ज्ञानी

हमारी यही भावना है कि भले ही एक अवतार का विलंब हो, उसमें हर्ज नहीं है, पर इस 'विज्ञान' का प्रसार होना चाहिए और विज्ञान लोगों को लाभकारी होना चाहिए। इसलिए खुलासा करने आया हूँ। मुझे फुरसत है, मुझे और कोई काम नहीं है। बिलकुल बुद्धि नहीं हो ऐसा मैं अकेला ही हूँ, इसलिए मुझे कोई झंझट नहीं है। आपको तो झंझट होती है। बाकी, मैं आपसे कुछ बड़ा नहीं हूँ, आपको भले ही ऐसा लगता हो। यह तो व्यवहार के खातिर यहाँ उँचे आसन पर बैठे हैं।

और मेरी 'हाइट' कितनी है, यह आप जानते हैं? लघुतम। लघुतम यानी क्या? इस दुनिया में

बिना वीतराग के और कोई तारणहार इस दुनिया में नहीं है।

जितने भी जीव हैं, उनमें सब से छोटे से छोटा मैं हूँ। यह मेरी 'हाइट' है। फिर इसमें आपको हरकत करे ऐसा है कुछ? यानी इन भौतिक में नाम में-रूप में-पैसे-मान-तान उन सभी में लघुतम। और यह दूसरी 'हाइट' यानी सेल्फ को लेकर हम गुरुतम हैं। मतलब 'होम डिपार्टमेन्ट' में हम गुरुतम और 'फोरिन डिपार्टमेन्ट' में हम लघुतम है।

हमारा यह लघुतम स्वरूप है, इसलिए लोगों का कल्याण कर देगा। व्यवहार से लघुतम में हूँ और निश्चय से गुरुतम में हूँ। मैं किसी का गुरु नहीं हुआ हूँ। सारे जगत को अपना गुरु मानता हूँ।

तब भगवान वश बर्ते

मेरा कोई मालिक नहीं है। भगवान भी वश हो गये हैं। तो फिर अब शेष क्या रहा?

लोग मुझ से कहते हैं, ''आप 'दादा भगवान' कहलवाते हैं?' मैंने कहा, 'नहीं, मैं क्यों कहलवाऊँ?' जहाँ भगवान खुद ही मेरे वश हो गये हैं, फिर कहलवाने की क्या ज़रूरत? भगवान, चौदह लोक का नाथ मुझे वश हो गया है और यदि आप मेरा कहा सेवन करें तो आपको भी आपका नाथ वश हो जायेगा। आपको भगवान वश हो जाये ऐसा रास्ता दिखलाता हूँ। भगवान होना तो बड़ा जोखिम कहलाये। इसलिए यदि मैं भगवान कहूँ तो मेरे सिर पर जिम्मेदारी आ जाये। आपका तो क्या जानेवाला है? और उसमें घुसकर मुझे क्या काम है? मुझे भगवान वश हो गये हैं, वे क्या गलत हैं?

भगवान हरएक को वश हो सकते हैं। जिस में अहंकार कम है तो हर्ज नहीं मगर जिसकी ममता चली गई है, उसे भगवान वश हुए बगैर रहते ही नहीं। जिसकी ममता संपूर्ण खतम हो गई, उसे भगवान वश हुए बगैर रहते ही नहीं।

केवलज्ञान के बाद अभेद स्वरूप मैं

व्यवहार में लघुतम और निश्चय में गुरुतम। हम से बड़ा कोई नहीं। भगवान बड़े थे वे तो हमारे वश हो गये। भगवान हमें हमारी भक्ति देखकर वश हो गये होते हैं! हम और भगवान एकाकार ही हैं और अलग भी हैं, ऐसे दोनों तरह से हैं। केवलज्ञान होने पर खुद एकाकार हो जायें। थोड़ा समय हम भगवान के तौर पर रहें, थोड़ी देर दर्शन करवायें, 'दादा भगवान के असीम जय जयकार हो' उस समय भगवान के तौर पर रहें। इसलिए सभी उल्लास में आकर झूमने लगते है न!

गुरुतम होने गये तो...

हम अपने मोक्ष में रहें और लघुतम रहें, फिर भी वैभव गुरुतम का भुगतते हैं। हमारा देखाव, वर्तन आदि सब लघुतम का होता है। जगत के लिए तो मैं सब से छोटा हूँ, लघुतम पुरुष हूँ और यह

'जो' प्राकृत हिस्से से मुक्त है, ऐसा 'जिसे' ज्ञान है वह ज्ञानी।

'ज्ञान' जिसे जानना है उसके लिए तो मैं सब से बड़ा हूँ, गुरुतम हूँ। यानी तुझे मोक्ष चाहिए तो मैं गुरुतम हूँ। मुझ से बड़ा कोई नहीं है और तुझे संसार में बड़ा होना है तो मैं लघुतम हूँ।

भाव में तो लघुतम ही

मैं आपका मालिक नहीं हूँ, आप मेरे मालिक हैं। मैंने अपने आप को कभी मालिकरूप माना ही नहीं है। आप मुझे लड़ें पर मैं आपसे नहीं लड़ूँगा। मैं लड़ूँ तो मैं गलती कर गया कहलाऊँ। और आप लड़ें तो, आपकी समझदारी में फर्क पड़ने के कारण लड़ पड़ें। कच्चाई की वज़ह से लड़ पड़ें न? बाकी, सारा जगत हमारा मालिक है, क्योंकि मैं लघुतम हूँ।

लघुतम यानी नीचे उतरना। वह तो खेल-खेल में नीचे उतर जा सकें। नहीं उतर जाये खेल-खेल में? हम तो आराम से उतर गये थे खेलते-खेलते। इसलिए भाव लघुतम ही रखना। जितना लघुतम भाव रखेंगे उतने गुरुतम में आगे बढ़ेंगे। लघुतम होने पर ही गुरुतम पद मिलता है।

मैं सभी से कहता हूँ न कि आप अविनय करेंगे तो चलेगा पर मुझ से अविनय नहीं किया जा सकता। क्योंकि उनको जिम्मेदारी का ख्याल नहीं है और मेरी तो जिम्मेदारी बनती है।

इसलिए आज तक किसी से नहीं लड़ा हूँ। इन सभी को बोल दिया था कि मैं आपका शिष्य हूँ। 'बाय रिलेटिव व्यू पोइन्ट' मैं सभी का शिष्य हूँ, लघुतम हूँ। 'बाय रिअल व्यु पोइन्ट मैं गुरुतम हूँ। यानी व्यावहारिक दृष्टि से, मेरे से कोई छोटा नहीं है, सभी मेरे से बड़े है और रिअल दृष्टि से, भगवान की दृष्टि से मुझ से बड़ा कोई नहीं है।

लघुतमभाव में रहना और प्रत्येक जीव के साथ, सारे ब्रह्मांड के जीवों के साथ अभेद दृष्टि रखना यह इस अक्रम विज्ञान का 'फाउन्डेशन' है। यह विज्ञान कुछ यों ही बिना 'फाउन्डेशन' के नहीं है।

पहचानना पद, ज्ञानी का

(१९५८ में आत्मज्ञान होने के बाद) मैं तो शरीर में एक मिनट के लिए भी नहीं रहता हूँ, पच्चीस सालों से एक मिनट भी नहीं रहा हूँ।

यह मन-वचन-काया से मैं बिलकुल अलग रहता हूँ। इसलिए इसे गालियाँ दे, मारें, तब भी मुझे हरकत नहीं होती। लोग मुझे पहचानते ही नहीं हैं तो फिर मुझे गाली कैसे दे सकें? और जो मुझे पहचानते हैं वे तो परमात्मा के तौर पर पहचानते हैं। यानी वे सभी मुझे गाली देनेवाले नहीं और ऐसा-वैसा वर्तन भी नहीं करते। आमलोग तो मुझे 'ए.एम.पटेल' के तौर पर या तो गुरु के तौर पर जानते हैं। मगर मैं किसी का गुरु होकर नहीं बैठा हूँ। मैं तो लघुतम पुरुष हूँ। ज्ञानी के तौर पर, ज्ञानी जो कहलाते है उसके तौर पर मैं बिलकुल लघुतम हूँ।

जिनके कषाय गये वे 'दर्शन' करने योग्य होते है। अकषायभाववाले वही 'ज्ञानी'।

अब आप मेरा स्वरूप ज्ञानी समझेंगे तो आप ज्ञानी होंगे। आप मुझे आचार्य स्वरूप समझेंगे तो आप आचार्य स्वरूप होंगे। मेरा स्वरूप आचार्य समझें तो मुझे हरकत नहीं है, पर आप आचार्यस्वरूप होंगे। आपको जिसकी ज़रूरत हो वह स्वरूप हमारा जानेंगे तो आप वैसे होंगे। मुझे कुछ नहीं होना है। मैं तो होकर बैठा हूँ। चार डिग्री का अनुत्तीर्ण हुआ मनुष्य! मैं तो लघुतम होकर बैठा हूँ। यानी हमारा पद जिसे जो समझना हो समझे, उतना वह उस रूप होगा। यह बात समझ में आ जाये तो काम निकल जाये।

पूर्ण लघुतम, वहाँ पूर्णत्व

जो 'रिलेटिव' में 'डिवेल्युएशन'(अवमूल्यन) हो गया, वह 'रिअल' में परमात्मा हो गया। यानी 'रिलेटिव' में 'डिवेल्यु' होने की ज़रूरत है। 'डिवेल्युएशन' होने में कोई नुकसान नहीं है, उलटा उसमें मुनाफा है। अय! आनंद से रहना। देखिये न, हम 'डिवेल्युएशन' करके बैठे हैं तो कैसा मज़ा आता है!

अब मेरा क्या कहना है? 'रिलेटिव' में आप जितने 'डिवेल्यु' होंगे, उतना 'रिअल' में परमात्मा पद खिलेगा। बड़ा आसान रास्ता है न! मतलब हम 'रिलेटिव' में लघुतम होने का प्रयत्न करें तो कुदरती रूप से 'रिअल' में गुरुतम होंगे और पूर्णत्व होगा।

व्यवहार की बात करें तो 'मुझ से कोई जीव छोटा नहीं है और सब से, छोटे से छोटा मैं हूँ' ऐसा भान रहे मतलब बहुत हो गया। अब आप लघुतम होंगे तो ही आपको मूल पद की प्राप्ति होगी और तो ही भगवान पद आपका होगा।

ज्ञानी की करुणा सभर वाणी

प्रश्नकर्ता : आपकी यह वीतराग वाणी भी कभी-कभी कड़ी निकलती है ऐसा किस आधार पर होता है?

दादाश्री : हमें तो अपार करुणा होती है। हमें सभी निर्दोष ही दिखाई देतें हैं। क्योंकि हम खुद निर्दोष दृष्टि करके सारे जगत को निर्दोष देखते हैं। तात्त्विक दृष्टि से देखा जाये तो दोष किसी का भी नहीं है, संयोग ही ऐसे हैं। मगर यह हम जो कड़ा बोलते हैं, वह सामनेवाले के प्रति संपूर्ण करुणा होने से, उसका रोग निकालने बोलते हैं। वीतराग भी किसी से लड़े नहीं है। कैसे सयाने हैं वीतराग! वीतराग तो मूल से ही लड़नेवालों में से नहीं, उनके शिष्य उनसे छल करें फिर भी वे लड़ते नहीं। हमारा भी यही ध्येय है। यह हमारे हिस्से में आया है, चौबीस तीर्थंकर जो माल छोड़ गये हैं, ''पीछे 'दादा' होनेवाले हैं वहाँ जाइये'', इसलिए हमारे हिस्से में आया है। हमारी डाँट तो 'करुणा की डाँट' है। हमारा स्वभाव तो वीतराग है। मगर 'जैसा रोग वैसा औषध, श्रीमुख से वाणी बहती'। जैसा सामने रोग हो वैसी यह नैमित्तिक वाणी निकले। यह करुणा का ही अवतार

वीतरागों का ज्ञान तो निर्भय ज्ञान है। यदि ज्ञानी पुरुष मिल जाये तो वह ज्ञान मिल जाये।

है। यह कारुण्यमूर्ति है। हाँ, जिस राह भी हो सके, अपना हल निकालना।

यह हमारी वीतराग वाणी ही सारा कचरा साफ कर देगी। हमें खुद नहीं जाना पड़ेगा। हम कहते हैं कि बाहर के सारे देश हिन्दुस्तान को 'वर्ल्ड' का केन्द्र मानकर यहाँ धर्म सिखने आयेंगे और तब बिलकुल ही भ्रष्टाचार नहीं होगा और किसी काल में जो सुख नहीं था ऐसा सत्‌युग का सुख लोगों के अनुभव में आयेगा। अन्य तीर्थंकरों की तुलना में अज़ोड ऐसा भगवान महावीर का शासन खड़ा होगा। अन्य किसी तीर्थंकर का शासन ऐसा अज़ोड नहीं था!

अभेद प्रेम वहाँ बुद्धि का अंत

भगवान कैसे हैं? अनासक्त। कहीं भी आसक्त नहीं।

प्रश्नकर्ता : और ज्ञानी भी आसक्त नहीं न?

दादाश्री : हाँ, इसलिए हमारा प्रेम निरंतर होता है और वह सब पर, समान होता है। गालियाँ दे उस पर समान, फूल चढ़ाये उस पर समान और फूल नहीं चढ़ाये उसके ऊपर भी समान। हमारे प्रेम में भेद नहीं पड़ता और अभेद प्रेम है वहाँ पर तो बुद्धि चली जाये। भेद नहीं करना उसका नाम प्रेम। अभेदता हुई वही प्रेम। वह प्रेम नोर्मालिटी कहलाये।

अभेद प्रेम उत्पन्न हुआ कि बुद्धि खलास हुई, इसलिए अहंकार खलास हुआ। फिर कुछ नहीं रहा और ममता नहीं रहे तभी प्रेम स्वरूप हो सकें। हम तो अखंड प्रेमवाले। हमारे इस देह के प्रति ममता नहीं है।

इस वाणी के लिए ममता नहीं है और मन के लिए भी ममता नहीं है।

न घटे-न बढ़े वह सच्चा प्रेम

प्रश्नकर्ता : सच्चा प्रेम किसका नाम कहलाये?

दादाश्री : सच्चा प्रेम वह कि जो घटे नहीं, बढ़े नहीं। ज्ञानी का प्रेम ऐसा होता है, जो घट-बढ़ नहीं होता। ऐसा हमारा सच्चा प्रेम सारे वर्ल्ड के ऊपर होता है। और वह प्रेम ही परमात्मा है।

'ज्ञानी पुरुष' का शुद्ध प्रेम जो दिखाई दे, ऐसा खुला दिखाई दे, वही परमात्मा है। परमात्मा वह कोई अन्य वस्तु ही नहीं है। शुद्ध प्रेम जो दिखाई देता है, वह बढ़े नहीं, घटे नहीं, निरंतर ही रहा करे, उसका नाम परमात्मा, प्रकट-खुले परमात्मा! और ज्ञान वह सूक्ष्म परमात्मा, उसे समझने में देर लगे।

ज्ञानी, प्रेम स्वरूप

प्रश्नकर्ता : शुद्ध प्रेम, वह बिना अहंकार धारण किए कैसे होता है?

शास्त्र में शब्द 'आत्मा' होता है। असल 'आत्मा' ज्ञानी में है।

दादाश्री : अहंकार है वहाँ शुद्ध प्रेम नहीं होता। अहंकार और शुद्ध प्रेम दोनों साथ नहीं रह सकते। शुद्ध प्रेम कब आता है? अहंकार पिघलने लगे तब से शुद्ध प्रेम आने लगे और अहंकार संपूर्ण पिघल जाने पर शुद्ध प्रेम की मूर्ति हो जाये। शुद्ध प्रेम की मूर्ति वही परमात्मा है। वहाँ पर आपका हर तरह से कल्याण हो जाये। वे निष्पक्षपाती होते हैं, कोई पक्षपात नहीं होता। शास्त्रों से परे होते हैं। चारों वेद पढ़ लेने पर वेद 'इटसेल्फ'(खुद) बोलें कि 'दिस इझ नोट धेट, दिस इझ नोट धेट'। तब 'ज्ञानी पुरुष' कहते हैं, दिस इझ धेट, बस! 'ज्ञानी पुरुष' तो शुद्ध प्रेमवाले, इसलिए तुरंत ही आत्मा दे दें।

प्रेम तो वीतरागों का ही

यह जगत आसक्ति से चल रहा है। प्रेम, वह तो 'ज्ञानी पुरुष' से लेकर भगवान तक होता है, उन लोगों को प्रेम का लायसन्स होता है। उस प्रेम से ही लोगों को सुखी कर दें। उस प्रेम से ही बाँधे फिर, छूट नहीं पायें। यानी 'ज्ञानी पुरुष' से तीर्थंकर तक सभी प्रेमवाले! जिन में लौकिकता नाममात्र को नहीं होती।

इस जगत में ऐसी कोई चीज़ नहीं है कि जिससे ज्ञानी खुश हों। केवल हमारे प्रेम से ही खुश होंगे। क्योंकि वे अकेले ही प्रेमवाले हैं। उनके पास प्रेम के अलावा अन्य कुछ है ही नहीं। सारे जगत के साथ उनको प्रेम है।

सर्व जंजाल में यदि समाधि रहती हो, तो समझना कि मुझे 'ज्ञानी पुरुष' मिले गये है।

प्रेम प्रकटाये आत्मऐश्वर्य

प्रश्नकर्ता : मुझे ज़रा प्रेम और करुणा के बीच क्या संबंध है, यह जानना है।

दादाश्री : करुणा कब इस्तेमाल की जाये? सामान्य भाव से सभी के दु:ख खुद देख सकते हैं, वहाँ करुणा रखें।

यानी करुणा मतलब क्या? एक तरह की कृपा है और प्रेम अलग वस्तु है। प्रेम को तो विटामिन कहा जाता है। ऐसा प्रेम देखने पर उसमें विटामिन उत्पन्न होता है। आत्मविटामिन। देह के विटामिन तो बहुत दिनों तक खाये हैं पर आत्मा का विटामिन चखा नहीं है। उससे आत्मवीर्य प्रकट होता है, ऐश्वर्य प्रकट होता है।

अब शुद्ध चेतन यानी शुद्धात्मा और वही परमेश्वर है। उनका नाम कब याद आये? जब हमें उनकी ओर से कुछ लाभ होता हो, तभी उनके ऊपर प्रेम आता है। जिसके ऊपर प्रेम आता है वह हमें याद आता है तब उसका नाम ले सकें। यानी जिसके ऊपर प्रेम आये ऐसे हमें मिले तब वे हमें याद आते रहें। आपको 'दादाजी' याद आते हैं?

प्रश्नकर्ता : हाँ जी।

दादाश्री : आपके लिए उनको प्रेम है, इसलिए याद आते हैं। अब प्रेम क्यों आया? क्योंकि दादा ने कुछ सुख दिया कि जिससे प्रेम उत्पन्न हुआ और प्रेम उत्पन्न होने पर फिर भुलाया ही नहीं जाता है न! उन्हें याद ही नहीं करना पड़े।

एक ही हथियार, शुद्ध प्रेम का

प्रश्नकर्ता : हमें आपके प्रति जो भाव जागृत होता है वह क्या है?

दादाश्री : वह हमारा प्रेम आपको खींचता है। सच्चा प्रेम सर्वत्र सारे जगत को पकड़ सके। प्रेम कहाँ-कहाँ होता है? प्रेम वहाँ होता है, जहाँ अभेदता होती है। यानी जगत के साथ अभेदता कब कहलाये? जब प्रेम स्वरूप हो जाये तब सारे जगत के साथ अभेदता कहलाये। इसलिए वहाँ प्रेम के सिवा और कुछ दिखाई ही नहीं देता। हमारे लिए जो प्रेम रहता है उसमें हर्ज नहीं है। वह आपकी मदद करेगा। जिससे अन्यत्र होनेवाला प्रेम उठ जायेगा।

प्रश्नकर्ता : मतलब हमारे में जागृत होनेवाला भाव आपके प्रेम का ही परिणाम है?

दादाश्री : हाँ, प्रेम का ही परिणाम है। ताकि प्रेम के हथियार से ही सयाने हो जायें। मुझे लड़ना नहीं पड़े।

ज्ञान की माता कौन? समझ। वह समझ कहाँ से प्राप्त होती है? ज्ञानी के पास।

मैं किसी से लड़ना नहीं चाहता, मेरे पास तो प्रेम का हथियार है। क्रोध-मान-माया-लोभ के हथियार मैंने जमीन पर रख दिये हैं। इसलिए उनका इस्तेमाल मैं नहीं करता। मैं प्रेम से जगत जीतना चाहता हूँ।

ज्ञानी बँधे हैं प्रेम से

प्रश्नकर्ता : अब यह ज्ञान लेने के बाद दो-तीन भव शेष रहते हैं तो उतने समय तक तो संपूर्ण करुणा सहाय करने को आप बँधे हुए हैं कि नहीं?

दादाश्री : बँधे हुए है अर्थात हम प्रेम से बँधे हैं। इसलिए आप जब तक प्रेम रखें तब तक बंधे हुए। आपका प्रेम छूटा कि हम अलग। आपका प्रेम संसार की ओर मुड गया तो हम अलग हो जायेंगे और आत्मा के प्रति आपका प्रेम रहा तो हम बँधे हुए हैं। आपको कैसा लगता है? प्रेम से तो बँधे हुए ही हैं न?

'ज्ञानी', अजोड प्रेमावतार

इसलिए तो 'दादाजी' सूक्ष्मभाव से सारे वर्ल्ड में घूमा करते हैं। मैं स्थूलभाव से यहाँ होता हूँ और दादाजी सूक्ष्मभाव से सारे विश्व में घूमते रहते हैं और सब जगह ध्यान रखते हैं। यानी यह प्रेमावतार है। इसलिए जहाँ कहीं किसीका मन ज़रा-सा उलझन में पड़ा कि वहाँ खुद आकर हाजिर हो जाए!

यानी यह सब होता ही रहता है। फिर भी इसमें चमत्कार जैसी कोई चीज़ नहीं है। यह स्वाभाविक है। किसी भी मनुष्य की स्थिति आवरण रहित होती है और थोड़ा सा कोई केवलज्ञान को आवृत करनेवाला आवरण शेष रहा हो और जगत में जिसकी जोड़ नहीं हो ऐसा प्रेम उत्पन्न हुआ हो, जिसकी जोड़ नहीं मिले ऐसा प्रेमावतार हुआ हो, वहाँ सबकुछ प्राप्त होता है।

फिर भी रहा फर्क चौदस-पूनम का

यानी जगत में कभी भी देखा नहीं गया हो ऐसा प्रेम यहाँ उत्पन्न हुआ है। क्योंकि जहाँ प्रेम उत्पन्न हो ऐसी जगह थी, वे संपूर्ण वीतराग थे। इसलिए वहाँ प्रेम दिखाई नहीं देता था। हम कच्चे पड़ गये इसलिए प्रेम रहा और संपूर्ण वीतरागता नहीं आई।

प्रश्नकर्ता : आपने कहा कि हम प्रेम स्वरूप हुए, मगर संपूर्ण वीतरागता उत्पन्न नहीं हुई। यह ज़रा समझना था।

दादाश्री : प्रेम मतलब क्या? किसी के प्रति किंचित्‌मात्र, ज़रा-सा भी भाव नहीं बिगड़े, उसका नाम प्रेम। यानी संपूर्ण वीतरागता, उसका नाम ही प्रेम कहलाये। प्रेम तो, जितना वीतराग हुआ उतना प्रेम उत्पन्न हुआ। संपूर्ण वीतराग को संपूर्ण प्रेम। यानी वीतद्वेष तो आप सभी हो ही गये हैं। अब हरेक

आड़े के साथ आड़ा होना यह जगत का स्वभाव है। आड़े के साथ सीधा होना यह ज्ञानीओं का स्वभाव है।

मामलें में धीरे-धीरे वीतराग होते जायेंगे, वैसे प्रेम उत्पन्न हो जायेगा।

प्रश्नकर्ता : अभी आपने यहाँ कहा कि हमारा प्रेम कहलाये। वीतरागता नहीं आई, वह क्या?

दादाश्री : वीतरागता मतलब यह हमारा प्रेम है जो ऐसे प्रेम दिखाई देता है और वीतरागों का प्रेम ऐसे दिखाई नहीं देता। मगर सही प्रेम तो उन्हीं का कहलाये। हमारा प्रेम तो लोगों को दिखाई दे। मगर उसे सच्चा प्रेम नहीं कहते (पूर्ण वीतरागों के प्रेम की तुलना में)। एक्झेक्टली जिसे प्रेम कहते हैं, वह यह नहीं कहलाये। एक्झेक्टली तो संपूर्ण वीतरागता होने पर ही सच्चा प्रेम कहलाये और हमें तो अभी चौदस हुई कहलाये, पूनम नहीं हुई है।

प्रश्नकर्ता : यानी पूनमवालों को इससे भी ज्यादा प्रेम होता है?

दादाश्री : उन पूनमवालों का ही सच्चा प्रेम। इस चौदसवाले में तो कही पर कच्चाई होती है। इसलिए पूनमवालों का ही सच्चा प्रेम होता है।

प्रश्नकर्ता : संपूर्ण वीतरागता हो और बिना प्रेम के हो ऐसा तो हो ही नहीं सकता न?

दादाश्री : वे बिना प्रेम के तो होते ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : यानी दादाजी, चौदस और पूनम में इतना बड़ा अंतर हो जाता है, इतना बड़ा तफ़ावत ऐसा?

दादाश्री : बहुत तफ़ावत। यह तो हमें पूनम जैसा लगे लेकिन बहुत तफ़ावत। हमारे हाथों में कुछ है ही कहाँ? और तीर्थंकरों के हाथों में तो सबकुछ! हमारे हाथों में क्या है? फिर भी हमें संतोष रहता हैं, पूनम जितना। हमारी शक्ति अपने लिए इतनी काम करती हो कि हमें पूनम हो गई हो ऐसा लगे।

ज्ञानी के दर्शन से कल्याण

प्रश्नकर्ता : ज्ञानी पुरुष के दर्शन का क्या महात्म्य? उसका क्या फल मिले?

दादाश्री : 'ज्ञानी पुरुष' शल्यरहित होते हैं। आप प्रसन्न चित्तवाले होने से सामनेवाले को प्रसन्नचित्तवाले के दर्शन करने से ही आनंद प्रकट होता है। 'ज्ञानी' के दर्शनमात्र से अनेक अवतारों के पाप भस्मीभूत हो जाते हैं।

वर्ल्ड में ऐसी कोई चीज़ नहीं है जो हम ज्ञानी को दें और उन्हें काम आये, क्योंकि किसी चीज़ की उन्हें भीख ही नहीं होती है। उनको लक्ष्मी की भीख नहीं होती, कीर्ति की भीख नहीं होती, विषयों की भीख नहीं होती, मान की भीख नहीं होती, निरिच्छक ऐसे 'ज्ञानी पुरुष' जिनके दर्शन मात्र से ही पाप धुल जायें। उनके पास बैठने से अपार शांति का अनुभव होता है।

मुक्त हास्य वर्ल्ड में एक 'ज्ञानी पुरुष' का ही होता है। जहाँ वीतरागता होती है, वहाँ मुक्त हास्य होता है।

हमें किसी भी संयोग में प्रतिपक्षी भाव उत्पन्न नहीं होता। हमारी आँखों में अन्य कोई भाव दिखाई नहीं देता, इसलिए लोग हमारे दर्शन करते हैं। किसी भी प्रकार का बुरा भाव आँखों में नहीं पढ़ा जाना चाहिए, तभी उन आँखों को देखने से समाधि होती है।

यह ज्ञानी के दर्शन वर्ल्ड का अजूबा कहलाये। यह तो ग्यारहवाँ आश्चर्य कहलाये। किसी भी तरह के प्रश्न पूछिये, कोटि प्रश्न पूछिये, वे देखकर कहेंगे। उनके पास शास्त्रों का शब्द नहीं होता। यहाँ एक मिनट में तो बहुत काम हो जाये।

प्रश्नकर्ता : प्रश्न नहीं है मगर हमें इस राह पर चलना है।

दादाश्री : हाँ, बस। यह दर्शन ही किया करना। दर्शन करने से सब हो जाये। आपको प्रश्न होते हों तो पूछना। बाकी प्रश्न खड़े नहीं होते हैं वहाँ केवल दर्शन से ही प्रश्न पूरे हो जायें। आपके मन में खुलासा हो जाये। यहाँ हिन्दुस्तान में जन्म लिया हो और 'ज्ञानी पुरुष' के दर्शन हो जायें न, तो कल्याण हो गया। 'एक' के अंक से शुरूआत करता हो या जो कुछ भी करता हो, ज्ञानी पुरुष मिल गये मतलब कल्याण हो जाये!

फल, ज्ञानी के दर्शन का

'सत्संग है पुण्याई संचालित, चाहूँ फल अभ्युदय-आनुषंगिक।'

'ज्ञानी पुरुष' को मिले तब से दो फल मिले। एक, अभ्युदय यानी संसार का अभ्युदय होता जाये, संसार फल मिले। दूसरा, आनुषंगिक यानी मोक्षफल मिले। दोनों साथ में मिले। और इसलिए तो शांति सर्वोच्च कोटि की रहती है। संसार का विघ्न बाधक नहीं होता और मोक्ष का काम होता है। दोनों साथ ही रहते हैं। यदि दोनों फल साथ नहीं मिलते तो वे 'ज्ञानी पुरुष' नहीं है। यह तो अनगिनत ऑवरड्राफ्ट है, इसलिए दिखाई नहीं देते हैं। यह सत्संग करते हो, इसलिए वे ऑवरड्राफ्ट पूरे होंगे ही।

खिले आत्मचंद्र, पूर्णदशा में

हमारे यहाँ तीन दिन उत्तम माने जाते हैं। एक नये साल का प्रथम दिन, एक यह जन्मजयंती और गुरुपूर्णिमा। इन दिनों में हमारा दूसरे लोगों के साथ रोजिंदा व्यवहार नहीं होता, इसलिए हम पूर्ण स्वरूप में एकाकार होते हैं। मैं (ज्ञानी पुरुष) उस स्वरूप में (दादा भगवान के साथ) एकाकार होता हूँ, उसका पूरा फल मिले। इसलिए दर्शन करने का महात्म्य है न!

समभाव, सभी धर्मों के लिए

प्रश्नकर्ता : आप साक्षात्कारी पुरुष हैं। अब आप जब किसी मंदिर में जायें, उससे मंदिर में जाने

'ज्ञानी पुरुष' ने ऐसा आत्मा जाना है कि जो किसी को किंचित्‌मात्र दुःख नहीं दे सके।

की प्रतिष्ठा उत्पन्न नहीं होती क्या?

दादाश्री : हम जहाँ जाये वहाँ सब जगह दर्शन करने जाते हैं। जिनालयों में, शिवालयों में, माताजी के मंदिरों में, मस्जिदों में, सब जगह दर्शन करने जाते हैं। यदि हम नहीं जायें तो लोग भी नहीं जायें। उससे उलटी परंपरा स्थापित होती है। हमारे से उलटी परंपरा स्थापित नहीं हो, इसकी हमारी जिम्मेदारी बनती है। लोगों को कैसे शांति हो, कैसे सुख पहुँचे ऐसे रास्ते हम निकालते हैं।

यह प्रेरणा है कुदरती

प्रश्नकर्ता : आपको यह धर्मप्रचार की प्रेरणा किसने दी?

दादाश्री : धर्मप्रचार की यह सारी प्रेरणा कुदरती है। मुझे खुद को जो सुख उत्पन्न हुआ, इसलिए भावना उत्पन्न हुई कि लोगों को भी ऐसा सुख उत्पन्न हो, यही प्रेरणा।

मुझे लोग पूछते हैं, 'आप यह जगत कल्याण का कार्य पूरा कैसे करेंगे? आपकी तो उम्र हो गई अब।

सुबह उठने के बाद चाय पीते-पीते ही दस बज जाते हैं। अरे भैया! हमें यह स्थूल में नहीं करना है, सूक्ष्म हो रहा है सब। यह स्थूल में केवल दिखावा करना है। स्थूल के आधार देने होंगे।

'मैं' अपने स्वरूप में और 'पटेल' जगत कल्याण की विधि में

ज्यादातर टाइम 'मैं' मूल स्वरूप में रहता हूँ यानी पडोसी के तौर पर रहता हूँ और थोड़े टाइम के लिए ही इसमें (व्यवहार में) आता हूँ। 'मूल स्वरूप' में रहने पर फिर फ्रेशनेस को और कुछ छूनेवाला नहीं न? रात में भी कभी सोया नहीं हूँ। पंद्रह मिनट के लिए ज़रा आँख लग जाये उतना ही, दो बार को मिलाकर पंद्रह मिनट, बाकी केवल आंख मूँदी होती है। इन कानों से ज़रा कम सुनायी देता है इसलिए सब समझें कि दादाजी सो गये हैं और मैं भी समझूँ कि ठीक है। मुझे सारी विधियाँ करनी होती हैं, इसलिए मैं अपने स्वरूप में होता हूँ और 'ए.एम.पटेल' विधि में होते हैं। यानी इस जगत का कल्याण कैसे हो, उसके लिए सारी विधियाँ किया करें। मतलब वे निरंतर विधिओं में होते हैं, दिन में भी और रात में भी।

प्रकृति को ऐसे मोडे ज्ञानी

बाकी, लोग तो समझें कि दादा आराम से अपने कमरे में जाकर सो जाते हैं। उस बात में कोई दम नहीं है। एक घंटे के लिए पद्मासन लगाता हूँ। इस सतहत्तर साल की उम्र में पद्मासन लगाकर बैठना, पैर तक अकड़ जायें मगर इससे आँखों की शक्ति, आँखों का प्रकाश आदि सब दुरस्त रहा है।

हमें दु:ख मुक्त करें वह 'ज्ञानी'। दु:ख बढ़ाये वह ज्ञानी नहीं।

हमें इस देह के लिए प्रीति कितनी है? इस देह से मोक्ष तो मिला, खुद का कल्याण तो हो गया, अब लोगों के कल्याण के लिए यह देह खर्च हो इसके लिए ही इसका जतन है और उतनी ही उससे प्रीति है। बाकी, उसको भी हम तो एक पड़ोसी की तरह निभाते हैं।

इस देह पर हमारा अपना कोई अधिकार है ही नहीं। जिस-जिस का होगा वे ले लेंगे। हमें तो इस देह को मित्र समान मानकर अपना काम निकाल लेना है। बाकी, इस देह में कब क्या हो जाये यह कहा नहीं जा सकता। यद्यपि हमारे अपने (शुद्धात्मा के) प्रदेश को कुछ भी होनेवाला ही नहीं है। जिस देह से मोक्ष में जाना है वह देह बहुत मज़बूत होती है, निर्वाण पानेवाली देह 'चरम शरीर' कहलाये।

हाजिरी ही कल्याण करे

प्रश्नकर्ता : आप जैसे व्यक्ति का जगत में क्या प्रदान होता है? यानी जगत कल्याण में उसका महत्व क्या है?

दादाश्री : उनकी हाजिरी ही जगत का कल्याण करे। जगत का कल्याण होनेवाला हो तब वे हाजिर हो जायें।

प्रश्नकर्ता : यानी व्यवस्थित ने आपको पसंद किया?

दादाश्री : व्यवस्थित के नियम ने। किसी ने कहा नहीं था। पहले से भावना ही थी कि यह जगत ऐसा नहीं होना चाहिए। जगत का कल्याण होना चाहिए। इसलिए इन कारणों को छोडा कि किसी को यह ज्ञान हो और लोगों का कल्याण हो जाये ऐसा। और ऐसा ज्ञान मुझे ही हो गया! मुझे खबर नहीं थी कि ऐसा ज्ञान होगा।

और कैसा ज्ञान प्रकट हो गया! मेरी धारणा अनुसार, हरएक मनुष्य का कल्याण हो ऐसा, और कल्याण हो ऐसा लोगों का पुण्य उदित हुआ। इसलिए अब जो माँगना चाहो वह माँग लेना।

सूक्ष्म दादा, निदिध्यासन स्वरूप में

प्रश्नकर्ता : दादा भगवान तो चौदह लोक के नाथ है, उसके सिवा हमें और क्या चाहिए?

दादाश्री : चौदह लोक का नाथ है मगर वह हमारे हाथों में कैसे आये? यह देहमंदिर है वहाँ तक पकड़ पायें। फिर देह मंदिर ही उड़ जाये तब? हाँ, यह आँखों से दिखाई देनेवाले को ही सब दादा मानते हैं। बाकी, मूल दादा भगवान अलग है। ये दिखाई देनेवाले दादा अलग और फिर बीच का हिस्सा, सूक्ष्म दादा!

सारी दुनिया का सबसे बड़ा आश्चर्य 'आत्मा' है। वह पा लिया यानी सर्वस्व प्राप्त हो गया।

प्रश्नकर्ता : तो आपने भावना जो कही, वह सूक्ष्म दादा कि भावना क्या होनी चाहिए?

दादाश्री : जब तक निदिध्यासन रहे तब तक कोई हर्ज नहीं है। यह स्थूल हाजिरी खोजने पर हर्ज है।

प्रश्नकर्ता : और इसी मूर्ति का निदिध्यासन होगा तो हर्ज नहीं होगा न?

दादाश्री : फर्स्ट क्लास रहेगा, चलते-फिरते, बोलते रहेगा। वे साथ-साथ दिखाई देंगे उतना ही नहीं, अपने साथ ही हो ऐसा लगे, बातें करते भी दिखाई दें। वैसा कायम टिके। हमारे नहीं होने पर भी सूक्ष्म दादा हजारों सालों तक रहेंगे।

कल्याण की भावना से प्राप्त हो पूर्ण दशा

जगत का कल्याण कौन कर सके? खुद का जो कल्याण करे वह दूसरों का करे।

जगत कल्याण के हम निमित्त हैं, कर्ता नहीं हैं। हम जगत कल्याण की भावना करते हैं, इसलिए एकदिन रूपक में आयेगी। जो जो भाव होते हैं वे रूपक में आये बगैर नहीं रहते। क्रिया करने की ज़रूरत नहीं है। रूपक अपने आप आता है। इसलिए भावना कीजिये।

लोगों का कल्याण कैसे हो यही हमें देखना है और इसलिए ही हमारा यह अवतार हुआ है। आधे जगत का कल्याण हमारे हाथों होगा और शेष आधे जगत का कल्याण हमारे इन फोलोअर्स (अनुयायीओं) के हाथों होगा।

हमारा कल्याण हो गया, अब दूसरों का कल्याण हो ऐसी भावना रखना। वही हमें पूर्ण दशा उत्पन्न करवायेगी। 'सब का कल्याण हो' यह भावना, पहले खुद का ही कल्याण करे।

भावना करना जगत कल्याण की

प्रश्नकर्ता : हमारी जो जगत कल्याण की भावना है, यही भावना अकेली हो जीवन में तो?

दादाश्री : हाँ, उस भावना का बहुत बड़ा फल मिलेगा। तीर्थंकरों ने क्या किया था? जगत कल्याण की भावना ही की थी बस। उसका फल क्या होता है कि वे तीर्थंकर होते हैं, जहाँ पैर पड़े वहाँ तीर्थ हो जाये। मैं भी वही भावना करता हूँ। आपकी वही भावना है, इसलिए यह भावना फलदायी होगी।

एक सच्चा मनुष्य हो तो जगत कल्याण कर सके। संपूर्ण आत्मभावना होनी चाहिए। एक घंटा लगातार भावना किया करना और शायद विक्षेप पड़े तो संधान करके फिर से चालू करना। ऐसे जो भावना की जाये तो उस भावना का जतन करना।

खुद निरंतर ज्ञाता-दृष्टा पद में रहते हो वह ज्ञानी।

ऐसे पाँच की ही जरूरत

जिसने जगत कल्याण का निमित्त ठान लिया है, उसे जगत में कौन रुकावट कर सके? कोई शक्ति नहीं है कि जो उन्हें रुकावट कर सके। सारे ब्रह्मांड के सर्व देवता लोग उन पर फूल बरसा रहे हैं। यानी इसे एक ध्येय के रूप में तय कीजिए न? जब से यह तय किया तभी से इस शरीर की ज़रूरतों की चिंता करने की नहीं रहती। जब तक संसारी भाव है तब तक ज़रूरतों की चिंता करनी पड़े। देखिए न, यह दादाजी की क्या शान-शौकत है? यह एक ही प्रकार की इच्छा रही तो फिर उसका हल निकल आया और देवसत्ता आपके साथ हैं। ये देव तो सत्ताधीश हैं, वे निरंतर सहायता करें ऐसी उनकी सत्ता है। ऐसे एक ही ध्येयवाले पाँच की ही ज़रूरत है। अन्य कोई ध्येय नहीं, अनिश्चितता नहीं। अड़चन में एक ही ध्येय और नींद में भी एक ही ध्येय।

यह विज्ञान दब जानेवाला नहीं

प्रश्नकर्ता : आपकी कृपा से जगत कल्याण की भावना हम सभी को हुई है। अब जगत इस ज्ञानरूपी समुद्र से अवगत हो ऐसा कैसे किया जाये?

दादाश्री : आपको तो अपने भीतर भावना ही रखनी है कि जगत कल्याण हो। वह भावना सच्चे दिल की है। जगत तो पानेवाला ही है, उसमें संदेह ही नहीं है। कुदरत ही इसमें सहायता करेगी। अन्य कोई सहायता नहीं कर सकता। वह सहायता ऐसी यथार्थ होगी कि जगत निश्चित रूप से प्राप्त करेगा। यह यों ही व्यर्थ जानेवाला नहीं है। यह 'विज्ञान' जो प्रकट हुआ है वह ऐसे ही दब जानेवाला नहीं है।

और ये सीमंधर स्वामी भगवान सारे जगत का कल्याण करेंगे। सारे जगत का कल्याण होगा। उनके निमित्त से सारे जगत का कल्याण होगा, क्योंकि वे विद्यमान हैं।

आधार देना, कल्याण के कार्य को

इस पब्लिक का, हिन्दुस्तान का कल्याण कैसे हो, इसकी पैरवी में हूँ। मैं आत्मा होकर, पुरुष होकर बोल रहा हूँ और पुरुषार्थ करने निकला हूँ। क्या करने से हिन्दुस्तान और फोरिन पर कल्याण के कार्य का असर हो, इसके लिए मैं मेरा सारा कार्य कर रहा हूँ। इस जग कल्याण के तंबू में जो सहारा दे सको वह देना। हमने जगत कल्याण का तंबू खड़ा किया है, सहारा देना चाहिए न?

प्रश्नकर्ता : हाँ जी।

दादाश्री : और सारा कलेवर ही बदल जानेवाला है। नये उपदेशक खड़े होंगे। पुराने उपदेशक रिटायर हो जायेंगे।

मन में ऐसा भाव है कि जैसा सुख मैंने पाया वैसा सुख सभी पायें। और कुछ नहीं चाहिए।

मोक्ष यानी क्या? दृष्टिभेद होना चाहिए। ज्ञानी पुरुष दृष्टिभेद करवा सकते है।

दुनिया की किसी चीज़ की कामना नहीं है। मगर उतना भी भाव है न? उतना भाव है तब तक उतनी डिग्री कम। कुछ भी भाव है तब तक संपूर्ण वीतराग नहीं हो पाये। इसलिए हमारी चार डिग्री कम है। पूर्ण वीतराग तो कुछ बोले ही नहीं। कैसा भी उलटा हो रहा हो तो वे देखें कि यह उलटा हो रहा है मगर कुछ नहीं बोलते। वीतराग एक अक्षर तक नहीं बोलते! हमारे काम आये, खटपटिये वीतराग।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, तो फिर तीनसौ सत्तावन, अट्ठावन और उनसठ डिग्री का क्या?

दादाश्री : वह तो फिर डिग्री बढ़ती जाये न? वह दशा तो बहुत ऊँची होती है। वह दशा अधिक ऊँची होती है।

प्रश्नकर्ता : तीन सौ साठवालों को यह जगत कैसा दिखाई देता है?

दादाश्री : कोई जीव दुःखी है नहीं, कोई सुखी है नहीं, कोई दोषी नहीं। सब रेग्युलर ही है। सभी जीव निर्दोष ही दिखाई दें। हमें भी निर्दोष दिखाई पड़ते हैं पर हमें श्रद्धा में और ज्ञान में निर्दोष दिखते हैं। चारित्र में नहीं है इसलिए हम बोलें कि यह गलत किया, इसका यह अच्छा है। अच्छा-बुरा बोलते हैं तब तक वर्तन में निर्दोष नहीं दिखाई दे। लेकिन हमारी श्रद्धा में ज़रूर निर्दोष दिखाई देते हैं, मगर अभी ऐसा वर्तन में नहीं आया है। यानी वर्तन में आने पर हमारी तीन सौ साठ डिग्री पूरी हो जायेगी।

जो मैंने पाया, वह सारा जग पाये

मैं कहा करता हूँ न कि भैया, में सत्ताइस सालों से (१९५८ में आत्मज्ञान होने के बाद) मुक्त ही हूँ और विधाउट टेन्शन हूँ। मतलब टेन्शन होता था वह ए.एम.पटेल को, मुझे नहीं होता था। मगर जब तक ए.एम.पटेल को टेन्शन रहता हो, तब तक हमारे लिए बोझ ही है न? वह पूर्ण होने पर हम समझें कि हम मुक्त हुए मगर जब तक देह है तब तक बंधन। हालाँकि हमें कोई एतराज नहीं है। दो अवतार ज्यादा हो तो भी एतराज़ नहीं है। हमारा इरादा क्या है कि 'यह जो सुख मैंने पाया है वह सुख सारा जग पाये।' यह अकेली ही भावना पूर्व भव में की होगी कि यह जो सुख मैंने पाया है वह लोग भी पायें। यह उस भावना का फल है।

शास्त्र में धर्म है, मर्म नहीं, मर्म ज्ञानी के हृदय में है।

हम आखिर में जायेंगे

प्रश्नकर्ता : आप ही कहते हैं न कि जगत कल्याण के लिए भले ही एक-दो अवतार ज्यादा हो मुझे कोई जल्दी नहीं है।

दादाश्री : जल्दी नहीं है, मतलब मैं क्या कहना चाहता हूँ? कुदरत के नियम में हो वहाँ तक भले ही मुझे रखे। मोक्ष के लिए अब जाना पड़े तो मैं जाने को तैयार हूँ पर मोक्ष की मेरी इच्छा नहीं है। जल्दी नहीं है, इसका क्या मतलब है? हमें मोक्ष तो बरतता ही है। अब लोगों का कल्याण होता है तो भले हो। अब मेरी इच्छा है कि लोगों का कल्याण हो जाये, उसके बाद हम आराम से जायेंगे।

ज्ञानी, शासन के सिंगार

ज्ञानी पुरुष कभी कभार होते हैं। प्रत्येक पाँचवे आरे (निश्चित समयावधि) में होते ही हैं, वर्ना इस जगत का, इस आखिरी तीर्थंकर के शासन का क्या होता? जंगल ही हो जाये। मतलब ऐसी कोई न कोई पुष्टि होती है। उसके होने से यह चलता रहता है। और यह शासन शोभायमान होगा। अब बहुत ही शोभायमान होनेवाला है।

यह शासन हमारा नहीं कहलाये। हम शासन के सिंगार कहलायें। भगवान महावीर के शासन के सिंगार! हम्म्! हमें शासन का क्या करना है? यह पीड़ा हम कहाँ सिर पर लें? यह तो भगवान महावीर का शासन कहलाये। वह तीर्थंकर को शोभा दे। वह हमें शोभा नहीं देता। हम तो उसमें बीच में पुष्टि देनेवाले। हमारा यह निमित्त है। उसे पूरा करके हम निकल जायेंगे। 'जय सच्चिदानंद'।

- जय सच्चिदानंद

हमारी भावना ऐसी होनी चाहिए कि इस जगत में हमारे मन-वचन-काया से किसी भी जीव को किंचित्मात्र दु:ख न हो।

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सांनिध्य में सत्संग कार्यक्रम

बडौदा

७ और ९ दिसम्बर - शाम ६-३० से ९ - सत्संग तथा **८ दिसम्बर** शाम ५-३० से ९ - ज्ञानविधि
स्थल : पारसी अगियारी ग्राउन्ड, सूर्यपेलेस होटेल के पास, सयाजीगंज, बडौदा. फोन : ९८२५०३२९०१
विशेष कार्यक्रम : ९ दिसम्बर सुबह ९ से ११ - परम पूज्य दादा भगवान, जिस घर में ५० साल तक रहे थे, उस घर को उसी रूप में बनाकर दर्शन हेतु उद्घाटित किया जायेगा।

अडालज

२ दिसम्बर - सुबह १० से १२ - **पूज्य नीरूमाँ के जन्मदिन के अवसर पर विशेष भक्ति**
तथा शाम ४ से ६ - **सत्संग**

२९ दिसम्बर - दोपहर ४ से ७ - **सीमंधर स्वामी भगवान की छोटी प्रतिमाओंजी प्राणप्रतिष्ठा**
(जिन्होंने अपने घर या ऑफिस के लिए सीमंधर भगवान की प्रतिमाजी ली हो और उसकी प्राणप्रतिष्ठा बाकी हो, उनसे निवेदन है कि अपनी प्रतिमा साथ लेकर आये।)

३० दिसम्बर - दोपहर ३-३० से ७ - **ज्ञानविधि** (आत्मसाक्षात्कार पाने का भेदज्ञान का प्रयोग)
स्थल : त्रिमंदिर, सीमंधर सीटी, अहमदाबाद-कलोल हाईवे, अडालज. फोन : (079) 39830100

Spiritual Retreat in English In the presence of Atmagnani Pujya Deepakbhai

Date : 13 to 16 December, 2007
Time : Everyday 9 am to 12 Noon, 4:30 to 7 PM, 9 to 10 PM
Gnanvidhi (Self-Realization Experiment) - 14 December, 4:30 to 7 PM
Venue : 'Tri-Mandir', Simandhar City, Ahmedabad-Kalol Highway, Adalaj,
Dist.: Gandhinagar-382421, Gujarat, India.
Contact : +91 9924343434, **Email :** simcity@dadabhagwan.org
Note : Don't forget to register, if you are attending this shibir.
For more information and ***registration****, visit* http://www.dadabhagwan.org/spiritual-retreat.html or contact on above phone/email.

पूज्य नीरूमाँ को देखिये टी.वी. चैनल्स पर...

भारत में 'दूरदर्शन' (नेशनल) पर सुबह ८-३० से ९ (सोम से शुक्र) 'नई दृष्टि, नई राह'
समग्र विश्व में (भारत के अलावा) सोनी टीवी पर (सोम से शुक्र) सुबह ७ से ७-३०, (हिन्दी में)

- हिन्दी में प्रकाशित नई पुस्तकें - प्रतिक्रमण, पैसों का व्यवहार, दादा भगवान?
- हिन्दी में नई वीसीडी - पूज्य दीपकभाई के कोलकता, बैंगलूर, इन्दोर में हुए हिन्दी सत्संग के सेट
- हिन्दी में **२००८ की साल का केलेन्डर** परम पूज्य दादाश्री के सुंदर फोटो तथा अनुपम सूत्रों के साथ प्रकाशित हो चूका है। प्राप्त करने के लिए त्रिमंदिर अडालज पर संपर्क करें : (०७९) ३९८३००३४, ९९२४३४३४२८